ISSN NO. 0971-8443

बाल भारती

जून 2019

मूल्य : ₹ 15

कहानी विशेषांक

- ब्लैक होल की पहली तस्वीर
- योग का अंग : आसन
- वक्त के साथ दगाबाज़ी

पर्यावरण पर हमारी पुस्तकें

प्रकाशन विभाग
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार
सूचना भवन, सी जी ओ कॉम्पलेक्स
लोधी रोड, नई दिल्ली -110003
वेबसाइट: **www.publicationsdivision.nic.in**

ऑर्डर के लिए संपर्क करें :
फोन : 011-24367260, 24365610
ई-मेल : **businesswng@gmail.com**
हमारी पुस्तकें ऑनलाइन खरीदने के लिए
कृपया **www.bharatkosh.gov.in** पर जाएं।
चुनिंदा ई-बुक एमेज़ॉन और गूगल प्ले पर उपलब्ध।

फॉलो करें @DPD_India

बच्चों की संपूर्ण पत्रिका

बाल भारती

1948 से प्रकाशित

वर्ष 72 : अंक : 1 पृष्ठ : 68 ज्येष्ठ-आषाढ़ 1941 जून 2019

लेख

योग का अंग : आसन	आचार्य कुमार शक्तिवेश	18
वक्त के साथ दगाबाज़ी	हरिवंशराय बच्चन	21

कहानियां

आम का बगीचा	प्रयाग शुक्ल	6
ओके गूगल	ममता कालिया	9
जब भुल्लन चाचा खो गए	प्रकाश मनु	11
प्राण रक्षक	रमेश तैलंग	23
मचा शोर, देखा चोर	वर्षा दास	26
संतुलन	उषा यादव	29
मीठी ईद	विज्ञान भूषण	38
कटी हुई मुस्कान	देवेन्द्र कुमार	41
प्यारा गोलू	वेद मित्र शुक्ल	45
ब्लैक होल की पहली तस्वीर	प्रदीप कुमार मुखर्जी	49
चमत्कारी दोस्त	मधु पंत	55
जटायु	राज शेखर	59
दवाई	रामदरश मिश्र	63

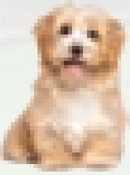

कविताएं

गर्मी की छुट्टी	प्रमोद लायटू	28
पर्यावरण बचाओ	मनीषा	66

माह की कविता

धरती पर तारे	भवानी प्रसाद मिश्र	33
चित्रकथा		34-37

वरिष्ठ संपादक : **राजेंद्र भट्ट**
संपादक : **आभा गौड़**
दूरभाष : 011-24362910
व्यापार व्यवस्थापक
ई-मेल : *pdjucir@gmail.com*
दूरभाष : 011-24367453

संयुक्त निदेशक (उत्पादन) : **वी. के. मीणा**
आवरण : **शिशिर दत्ता**
चित्रांकन : **प्रज्ञा उपाध्याय, शिवानी**

ई-मेल : *balbharti1948@gmail.com*
वेबसाइट : *www.publicationsdivision.nic.in*
फेसबुक पेज : *www.facebook.com/publicationsdivision*

संपादकीय पत्र व्यवहार का पता :
संपादक 'बाल भारती', कमरा नं- 645, छठा तल, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003

हमारी बात

बच्चो! आपने कभी सोचा कि आप और हमारे बीच की कड़ी क्या है? सोचो...सोचो...? आपके और हमारे बीच की महत्वपूर्ण कड़ी है- किस्से-कहानियां और उन्हीं के माध्यम से मिलने वाली जानकारियां। कहानी बच्चों ही नहीं, बड़ों के भी मन-मस्तिष्क को सीधे प्रभावित करती हैं। कब कौन-सा पात्र हमारी सोच, विचारधारा और मानसिकता को प्रभावित कर जाता है, पता ही नहीं चलता। और वह जीवित रहता है हमारे बीच- हमारा हिस्सा बनकर। इसीलिए वीर शिवाजी, थॉमस अल्वा एडिसन जैसे कितने ही लोगों की जब चर्चा की जाती है तो उनके जीवन को आगे ले जाने के लिए उन कहानियों की चर्चा अवश्य होती है जिन्हें सुना कर उनकी परवरिश की गई। इसीलिए पचतंत्र, रामायण, महाभारत, बायबल आदि में संकलित कथाएं बचपन से ही बच्चों को सुनाई जाती हैं जिससे वे जीवन के मूल-भूत सिद्धांतों को सहजता और सरलता से समझें और यह स्वाभाविक रूप से जानें कि क्या उचित है और क्या अनुचित। कहानियों से जुड़े भाव और तथ्य कहीं न कहीं उन्हें जीवन से जोड़ते हैं और बच्चे सहजता से उसी विचारधारा के अनुरूप अपना मार्ग सुनिश्चित कर अपने व्यक्तित्व को विस्तार देते हैं।

बच्चो! आखिर क्या होता है कहानियों में कि कोर्स की किताबें देखते ही नींद आती है जबकि कहानियां सुनते-पढ़ते व्याकुलता बढ़ती जाती है? ऐसा इसीलिए है कि कहानियां हमारे जीवन में, मस्तिष्क में कल्पना और यथार्थ का घालमेल कर उन्हें ऊंची उड़ान देती हैं। वह उड़ान कभी परीकथा, कभी पचतंत्र के जीव-जंतुओं तो कभी हैरी पॉटर की जादुई दुनिया, कभी अलादीन का चिराग तो कभी रॉबिन हुड की वीरता से हमारे मन में घर कर जाती है। इसीलिए प्राय: कोशिश ये की जाती है कि हर कहानी के माध्यम से आप तक कोई ऐसा संदेश जाए जो सरलता से आपके व्यक्तित्व को प्रभावित कर सके। आपकी कल्पना को नई सोच और दिशा दे सके, वह भी भरपूर आनंद के साथ। सफल व्यक्तित्व, अनुसंधान, घटनाएं कभी कहानियों के माध्यम से हमारा हिस्सा बनती हैं तो कभी कहानियों में संकलित काल्पनिक जीवन के सुखद अनुभव जीवन को नई मुस्कान और पहचान दे जाते हैं।

बच्चो! अभी आपका ग्रीष्मावकाश चल रहा है। स्कूल के गृहकार्य, छोटी-मोटी गतिविधियां और विभिन्न कोर्स आपको व्यस्त रखते होंगे। ऐसे में भला मैं कैसे पीछे रह जाती, मैं भी तो तुम्हारा महत्वपूर्ण हिस्सा हूं। तो इस वर्ष जून अंक में जाने-माने सुप्रसिद्ध लेखकों की विभिन्न विषयों पर आधारित मनोरंजक कहानियों का आनंद 'कहानी विशेषांक' में लीजिए और हमें बताइए आपको हमारा यह उपहार कैसा लगा। हमें इंतजार रहेगा।

आपकी बात

मैं *बाल भारती* का एक नियमित पाठक हूं। हम इस पत्रिका को बहुत मन से पढ़ते हैं। खुशी की बात है कि पत्रिका नया महीना लगने से पूर्व ही पढ़ने को मिल जाती है। अप्रैल 2019 अंक हमने पढ़ा। संपादकीय पढ़कर आत्मिक ज्ञान प्राप्त हुआ। कहानी *'हनी मनी और सनी', 'सही राह', 'यमराज आए ट्रैफिक संभालने'* खूब पसंद आई। लेखों में *'भीमराव आंबेडकर : प्रेरणा के स्रोत'* और कविताएं खूब पसंद आईं।

–बद्री प्रसाद वर्मा अनजान, गोरखपुर

बाल भारती का फरवरी अंक पढ़ा। पढ़कर बहुत अच्छा लगा। इस अंक में प्रकाशित कहानी *'ईमानदारी, 'यमराज आए ट्रैफिक संभालने' और 'बच्चों का ज्ञानालय'* बहुत पसंद आया। लेखों में *'धरती को बचाने की चुनौती'* विशेष पसंद आया। मैं इस पत्रिका का पिछले पांच साल से पाठक हूं। मैं बहुत सारी बाल पत्रिकाएं पढ़ता हूं और हर तरह की पत्रिकाएं देखता हूं लेकिन *बाल भारती* पत्रिका जैसी कोई दूसरी पत्रिका नहीं है। *बाल भारती* पढ़ना मुझे बहुत पसंद है।

–अजय, पटना

बाल भारती अप्रैल 2019 अंक पढ़ा। इस बार जानकारीपरक सामग्री की सौगात के साथ पत्रिका मिली। मैं यह पत्रिका 2010 से पढ़ता आ रहा हूं, तब मैं आठवीं कक्षा में पढ़ रहा था। अप्रैल अंक

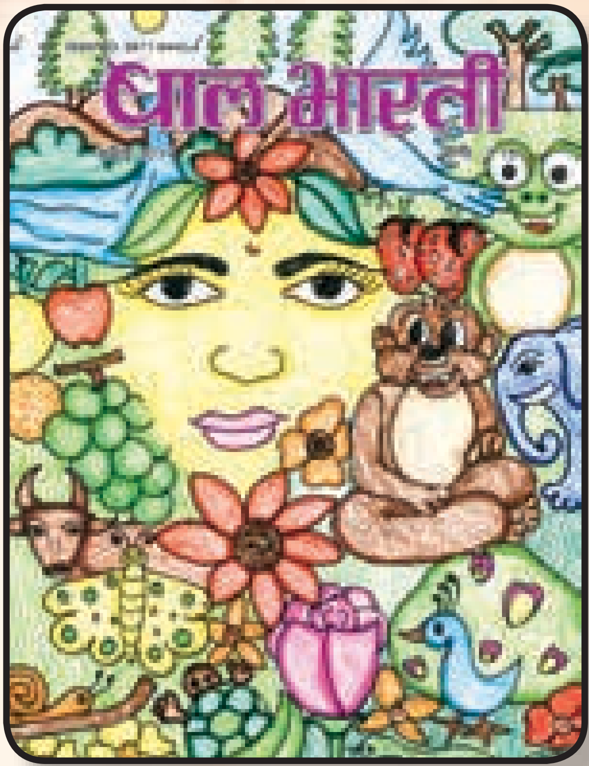

में प्रकाशित सभी कहानियां, कविताएं और लेख मुझे बहुत पसंद आए। मैं यह पत्रिका पढ़ने के बाद उन लोगों को भी यह पत्रिका देता हूं जिनके पास पढ़ने के लिए पत्रिकाएं नहीं होती।

–अमन, दिल्ली

बाल भारती अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। यह अंक बहुत ही मनोहर था। इसमें प्रकाशित लेख *'धरती को बचाने की चुनौती' और 'बुद्धिमान होती मशीनें'*, कहानियों में *'सही राह', 'ईमानदारी', 'स्वास्थ्य: जीवन की सबसे बड़ी पूंजी' और 'शनल किसी से कम नहीं'* बहुत अच्छी लगीं। कविताओं में *'वन है तो जल है' और 'नानी-नानी'* बहुत पसंद आई।

–संतोष कुमार, दिल्ली

बाल पाठकों से निवेदन है कि पत्रिका में प्रकाशित सामग्री के विषय में अपनी प्रतिक्रिया हमें भेजें।
आप हमें ई-मेल balbharti1948@gmail.com पर भी अपनी प्रतिक्रिया भेज सकते हैं। लेखकों से निवेदन है कि वे रचना के साथ अपना पता, ई-मेल, फोन नंबर, अवश्य भेजें। रचना की छायाप्रति अपने पास रखें। अस्वीकृत रचनाएं लौटाई नहीं जाएंगी।

आम का बगीचा

–प्रयाग शुक्ल

सोनू ने नए शहर में पहुंचते ही, आम का वह बगीचा देख लिया था। फरवरी का महीना था, उसमें खूब बौरें आई हुई थीं। उनकी कुछ महक भी हवा में तैर रही थी। ट्रक से सारा सामान उतारा जा रहा था। वह क्वार्टर के गेट के बाहर ही खड़ा हुआ था। ज्योंही उसे ट्रक पर तमाम सामानों के बीच अपनी साइकिल दिखाई पड़ी, उसने उसे उतरवा लिया। और मम्मी से पूछकर, उसे लेकर निकल पड़ा। मम्मी ने भी उसे जाने दिया। घर पर अभी सामान को जमाना जो बाकी था। खाना भी आज घर पर नहीं बना था। इस शहर में यह पहला ही दिन था जहां उसके पिता की नई पोस्टिंग हुई थी। खाने में बाहर से पिज्ज़ा ही मंगवा लिया गया था। सबने मज़े से खाया था। सबसे अधिक आनंद से तो सोनू ने ही, जिसे पिज्ज़ा बहुत पसंद था।

जब वह साइकिल लेकर निकला तो मम्मी ने चेतावनी दी, ''ज्यादा दूर मत जाना। पास में ही रहना।'' 'रुचिका!' उसने अपनी छोटी बहन के बारे में भी पूछा मम्मी से। मम्मी बोली ''वह तो सो रही है।''

''अच्छा'' सोनू ने कहा। वह चाहता था बहन भी साथ में रहे, तो वह उसे वह बगीचा दिखाएगा, जो उसने आज यहां पहुंचते ही देख लिया था। बगीचा रेलवे क्वार्टर से बहुत दूर भी नहीं था। सोनू के पिता रेलवे में ही अधिकारी थे इसलिए यहीं उन लोगों को रहने के लिए क्वार्टर मिला था, जो बड़ा-सा था। गेट के भीतर घुसते ही कुछ पेड़-पौधे थे। हरियाली थी। सोनू को इसलिए वह क्वार्टर अच्छा लगा था। उसे बागवानी का भी थोड़ा बहुत शौक है।

सोनू ने मन ही मन तय कर लिया था कि वह आम के उसी बगीचे की ओर जाएगा, जिसे उसने आते हुए देखा था। वह यहां से कोई आधा-पौन किलोमीटर ही तो होगा। हवा अच्छी थी। उसे

साइकिल चलाने में आनंद आ रहा था। जिस रास्ते पर वह जा रहा था, उसमें भी कुछ नीम और आम के पेड़ थे। इन आम के पेड़ों पर बौरें आई ही थीं। उनकी हल्की सुंदर सुगंध भी हवा में बसी हुई थी, वैसी ही जैसी यहां आते हुए आम के बगीचे से तैर आई थी। बीच-बीच में कोई मालगाड़ी, कोई पैसिंजर, कोई एक्सप्रेस ट्रेन धड़धड़ाती हुई गुजरती तो वह आवाज से ही समझ जाता था कि किस ट्रेन की आवाज है। वह तो बचपन से ही रेलवे क्वार्टरों में रहा था। सहसा उसे अपने दोस्त अतुल की याद आ गई जो उसी शहर के स्कूल में सोनू के साथ पढ़ता था, जहां से सोनू आज इस नए शहर में आया है। पता नहीं अतुल इस वक्त क्या कर रहा होगा। साइकिल चलाते हुए सोनू को यह भी याद आ रहा था कि अतुल और वह अपनी-अपनी साइकिल लेकर कभी-कभी खेतों की ओर निकल जाते थे। जिस शहर से सोनू यहां आया है, वह गन्ने वाला इलाका था। और उसे याद है कि अतुल और उसको गन्ने के खेत वाले किसान कभी गन्ने का रस पिला देते थे, तो कभी ताजा गुड़ भेंट कर देते थे।

आम के बगीचे के पास पहुंचकर, सोनू ने इधर-उधर निगाह दौड़ाई। बगीचा बड़ा था, आम के बहुत सारे पेड़ थे। एक ओर कुछ खाली-खाली जमीन थी, जिसमें दो छोटे-छोटे कमरे-से बने हुए थे। वहीं, पास में, कुछ लड़के क्रिकेट खेल रहे थे। वह उनके और पास तक चला गया और अपनी साइकिल के सहारे खड़े होकर उनका खेल देखने लगा। हां! आज तो रविवार है, तभी ये क्रिकेट खेल रहे हैं। स्कूल की छुट्टी जो होगी। बीच में, जब थोड़ी देर के लिए खेल रुका तो उसी की उम्र का एक लड़का, सोनू की ओर आया और बोला, ''हमारे साथ खेलोगे? हम दो टीमें बनाना चाहते हैं।'' यह भी पूछा कहां रहते हो, कहां पढ़ते हो, नाम क्या है? सोनू ने सब बताया, और जब उससे उसका नाम पूछा तो उसने कहा, 'मेरा नाम प्रभात है, मैं यहीं रहता हूं। इन्हीं कमरों में। मेरे पिता आस-पास के आम के बगीचों की रखवाली करते हैं। और मेरा एक बड़ा भाई है जो शहर में फलों की एक दुकान में काम करता है।

सोनू ने प्रभात की ओर थोड़े अचरज के साथ देखा, उसके कपड़े साफ-सुथरे थे। वह बिल्कुल चुस्त-दुरुस्त लग रहा था। सोनू को अचरज इस बात का भी हुआ था कि यह रहता तो झोपड़ीनुमा कमरों में है, पर, कपड़े इसके साफ-सुथरे, अच्छी तरह इस्त्री किए हुए हैं, और वह उसी की तरह छठी कक्षा में पढ़ता है! न जाने क्यों उसके मन में यह बात बैठी हुई थी कि ऐसी जगहों में रहने वाले बच्चे साफ-सुथरे नहीं होते। वे पढ़ने नहीं जाते। पर, प्रभात तो उसी की तरह छठी में पढ़ता है। हां, एक-दूसरे स्कूल में। सोनू शुरू से केंद्रीय विद्यालय में पढ़ता आया है। यहां भी उसका दाखिला केंद्रीय विद्यालय में ही होगा, ऐसा पापा ने बताया है। बातचीत शुरू में प्रभात के साथ रुक-रुक कर कुछ झिझकते हुए ही हुई थी, पर धीरे-धीरे दोनों एक-दूसरे से जल्दी ही खुल गए थे। सोनू को लगा प्रभात उसका दोस्त बन सकता है। और सचमुच ही कुछ दिनों बाद दोनों की दोस्ती हो गई। सोनू भी उन लोगों की टीम में शामिल होकर क्रिकेट खेलने लगा। आसपास के, बस्ती के, और भी लड़के जुड़ते गए। दो टीमें भी बन गईं और उन्होंने पास के ही एक मैदान में, अपने खेलने की जगह भी बना ली। मैदान सड़क से कुछ दूर था, पर, बहुत दूर भी नहीं। साइकिल से वहां पहुंचना मुश्किल भी न था।

सोनू, प्रभात के घर भी आने-जाने लगा। प्रभात की मां उसे कुछ-न-कुछ खिला भी देतीं। उसे वह सब बहुत अच्छा लगता। प्रभात ने बताया कि उसकी मां थोड़ा बहुत पढ़ी-लिखी भी है। सिलाई का काम करती हैं। आस-पास के क्वार्टरों से कपड़े सीने का काम भी उसे मिल जाता है। कुछ आमदनी भी हो जाती है।

सोनू ने अपनी मां को यह

सब बताया, और कहा कि वह प्रभात को अपने जन्मदिन पर घर बुलाना चाहता है। मां कुछ सोच में पड़ गई, फिर बोली, ''अच्छा बुला लो।''

जब प्रभात आया तो वह सोनू की मां को भी अच्छा लगा। वह सोनू के लिए उपहार भी लाया था जो उसकी मां ने सिलकर दिया था– किताबें लपेटकर रखने का एक छोटा-सा सुंदर थैला। प्रभात अक्सर सोनू के घर आने लगा। सोनू भी अक्सर उसके यहां जाने लगा, और सब साथ मिलकर क्रिकेट खेलते ही थे। प्रभात की बैटिंग बहुत अच्छी थी, उसका स्वभाव भी अच्छा था। वह सभी की मदद करता था इसीलिए सभी उसे पसंद करते थे।

एक दिन मैदान में क्रिकेट खेलते समय प्रभात को फील्डिंग करते हुए गेंद लेने के लिए बहुत दूर जाना पड़ा। किसी ने छक्का मारा था। गेंद जहां जाकर गिरी थी, वहां कुछ कंटीले तार थे, वह उनमें उलझ-सा गया। थोड़ी देर तक वह उठ ही नहीं सका। तब सब उस तरफ भागे कि जाने प्रभात को हो क्या गया है! वहां पहुंचकर जो कुछ उन्होंने देखा, उससे सब सन्न रह गए। प्रभात के कपड़े फट गए थे और उसके शरीर के कुछ हिस्सों से खून भी निकल रहा था। थोड़ी देर तक तो किसी की समझ में आया ही नहीं कि क्या करना चाहिए! तब किसी ने कहा, ''अरे, इसे तुरंत अस्पताल ले चलते हैं।'' दो-तीन बच्चों ने उसे सहारा दिया और सड़क तक ले आए। उन्हें उम्मीद थी कि कोई-न-कोई गाड़ी उनकी मदद के लिए जरूर रुकेगी। पर, दो बड़ी गाड़ियां गुजर गई और काफी हाथ हिलाने के बावजूद रुकी नहीं। गनीमत है एक टेंपो उधर से खाली जा रहा था... रुका और प्रभात की हालत देखकर, उसे अस्पताल ले जाने के लिए तैयार हो गया। अस्पताल में उसकी मरहम-पट्टी हुई। कुछ दवाएं भी दी गई। डॉक्टर ने कहा, घबराने की बात नहीं है। पर, अभी थोड़ी देर तक उसको यहीं आराम करना चाहिए। उसे बेड पर लिटा दिया गया। एक नर्स थोड़ी देर पर आकर उसको देखती रही। सोनू और एक-दो लड़के भी वहीं बैठे रहे। करीब घंटे भर बाद अस्पताल से प्रभात को छुट्टी मिली। एक और मित्र के साथ सोनू प्रभात को घर पहुंचा आया। प्रभात की पट्टियां देखकर उसकी मां पहले तो बहुत चिंतित हुई। पर, हाल जानने के बाद उन्होंने उन दोनों को बहुत आशीर्वाद दिया। सोनू घर पहुंचा तो उसकी मां भी चिंतित थी क्योंकि टीम के बच्चे उसकी साइकिल घर पर छोड़ गए थे और सोनू की मां को सारा हाल भी बता दिया था।

सोनू घर पहुंचा तो उसकी मां ने उसको शाबाशी दी कि वह प्रभात को लेकर अस्पताल गया। उसके पिता भी दफ्तर से आ चुके थे। उन्होंने भी सोनू से यही कहा कि ऐसे मौकों पर जो करना चाहिए, वह सोनू ने किया। और यह बहुत अच्छी बात थी। उन्होंने एक सुझाव भी दिया कि जब वे लोग क्रिकेट खेलने जाएं तो साथ में एक 'फर्स्ट एड बॉक्स' रखा करें, जिसमें मरहम-पट्टी का सामान रहता है। तभी सोनू की मां ने कहा, ''अरे, तुम खुद एक ऐसा बॉक्स बना सकते हो।'' और सचमुच अगले दिन सोनू की मां, सोनू और उसकी बहन ने मिलकर एक सुंदर-सा फर्स्टएड बॉक्स बनाया– गत्ते के बॉक्स से, जिसमें उसके पापा का स्मार्ट फोन आया था और अब वह एक कोने में बेकार पड़ा था। मम्मी ने उसमें 'फर्स्टएड' की सब चीजें भी रख दीं : रुई, एंटी सेप्टिक क्रीम, डिटॉल की छोटी बोतल, बैंडेज आदि। अगली बार जब वह 'फर्स्टएड बॉक्स' लेकर मैदान में गया तो सबको यह आइडिया बहुत अच्छा लगा।

सोनू और प्रभात तो बहुत अच्छे दोस्त बन गए थे। उनकी मंडली में दो-तीन और लड़के भी शामिल हो गए। आम का बगीचा अब ज्यादा गुंजायमान था। ❑

–एच-416, पार्श्वनाथ प्रेस्टिज, सेक्टर-93ए, नोएडा, उ.प्र.-201304

ओके गूगल

–ममता कालिया

गुग्गू का स्कूल में पुकारा जाने वाला नाम तत्सम है। लेकिन घर में कौन लेता है स्कूल का नाम। गुग्गू को भी अपने लिए गूगल या गुग्गू सुनने की आदत है।

उसका यह नाम गूगल की ही देन है। उसके पापा सारे दिन कंप्यूटर पर काम करते हैं। जब बच्चे का नाम रखने की बात चली तो गूगल से जिंदगी चलाने वाले इस बच्चे के पापा ने कहा, यह हमारा गुग्गू है।

अब तो गुग्गू सात साल का है। उसकी बहन आद्या तेरह की है। सुबह सात बजे दोनों को तैयार होकर स्कूल की बस का इंतजार करना पड़ता है। गुग्गू और आद्या स्कूल बैग लाद कर घर के फाटक तक आ तो जाते हैं, उनकी आंखों में नींद भरी रहती है। अगर बस आने में देर लगती है तो गुग्गू कहता "दीदी मम्मा हमको थोड़ी देर और सोने देती तो कितना अच्छा होता।"

"क्या फायदा" आद्या कहती है, "मम्मी सिर पर खड़ी आवाजें मारती रहती हैं। उठना तो पड़ता ही है।" तभी बस आ गई।

बस की सवारी बच्चों को अच्छी लगती। नींद हवा हो जाती। सारे दोस्त मिल जाते। गुग्गू और आद्या पढ़ने में तेज थे। हर विषय में ए प्लस लाते।

आद्या के बाल बहुत लंबे थे। इसलिए स्कूल के सालाना जलसे में उसे हमेशा भारतमाता या सरस्वती बनाया जाता। गुग्गू की आवाज बहुत अच्छी थी। उसे नाचने का भी शौक था।

हर सालाना जलसे से ये बच्चे इनाम पाकर लौटते।

एक दिन टीचर ने आद्या की कक्षा को इक्विनॉक्स के बारे में छोटा लेख लिखने को कहा। सब बच्चे घबरा गए। कई दिन पहले टीचर ने इक्विनॉक्स के बारे में एक-दो पंक्तियां बताई थीं। आद्या घर आकर सोच में डूब गई। इतना याद था कि यह कुछ धरती और सूरज का मामला है, पर क्या है यह याद नहीं आ रहा था।

आद्या और गुग्गू के घर में एक छोटा-सा उपकरण लगा था जिसे कहते हैं। 'गूगल होम मिनी' यह एक वाईफाई स्पीकर होता है जो घर के सेवक की तरह काम कर देता है। ये बिजली बुझाने, दरवाजे बंद करने जैसे छोटे काम तो करता ही है, साथ ही कठिन सवालों के जवाब ढूंढने का रास्ता बताता है।

आद्या ने गूगल होम मिनी के आगे खड़े होकर पूछा, "*ओके गूगल वॉट इज़् इक्विनॉक्स?*"

गूगल मिनी ने कहा, 'यह धरती और सूरज के बारे में है। गूगल के पास जाओ *प्लीज।* जिस समय पापा ने डेस्कटॉप पर काम बंद किया आद्या वहां पहुंच गई और उसने गूगल पर *लॉग इन* किया। अरे! यहां तो जानकारी का भंडार था। अभी थोड़ा सा ही पढ़ा तो सवाल का जवाब साफ समझ आ गया कि साल में दो बार ऐसा समय आता है जब सूरज इक्वेटर यानी भूमध्यरेखा के ठीक ऊपर चमकता है। ऐसा सिर्फ 20 मार्च और 22 सितंबर को होता है। इन दो दिन पृथ्वी पर दिन और रात एकदम बराबर होते हैं, कोई न कम न ज्यादा। यह शब्द दो लैटिन शब्दों से जुड़कर बना है। 1. एक्वस जिसका अर्थ है समान। 2. नॉक्स जिसका मतलब होता है रात।

वाह क्या कहने। आद्या की समझ में फट से आ गया। उसने अपनी कॉपी में साफ-साफ लिखावट में इक्विनॉक्स के विषय में लिखा और कक्षा में 10/10 नंबर पाए।

इसी तरह एक दिन कक्षा में तत्सम उर्फ गुग्गू 13 का पहाड़ा सुनाने में अटक गया। 12 तक के पहाड़े उसे मुंहजुबानी याद थे मगर पता नहीं क्यों 13 का याद करना मुश्किल लग रहा था। उस दिन स्कूल से आकर उसने गूगल होम मिनी के सामने बैठकर कहा "*ओके गूगल टैल मी टेबिल ऑफ थर्टीन*" गूगल मुझे 13 का पहाड़ा बताओ।'

गूगल होम मिनी की तो सिट्टी-पिट्टी गुल हो गई, थोड़े सेकेंड को।

गूगल सेवक मौन रहा। तभी कमरे में आद्या आ गई। उसने गुग्गू की दिक्कत पहचान कर कहा, 'तुम्हारा नाम गुग्गू है इसका मतलब यह नहीं कि हर वक्त गूगल मिनी के पीछे पड़े रहो। इधर लाओ कॉपी में लिख कर देती हूं 13 का पहाड़ा। तुम नीचे बगीचे में घूम-घूम कर याद करो। 5 मिनट में याद हो जाएगा।

आद्या ने लिखा।

गुग्गू ने बार-बार गूगल होम मिनी से पूछ कर इतना जान लिया कि जोड़-घटाव के सवालों में तो यह बहुत तेज है लेकिन पहाड़े रटाने में फिसड्डी है।

एक और काम में गूगल होम मिनी बहुत तेज था, बच्चों ने पता लगाया। मुश्किल शब्दों के अर्थ बताने में। अब तो आद्या और गुग्गू, दोनों अपने होमवर्क लेकर गूगल होम मिनी के सामने बैठ जाते हैं। जिस भी शब्द का अर्थ उन्हें समझ न आए, वे बस्ते में से मुटल्ला शब्दकोश निकालने की बजाय कहते हैं, *ओके गूगल वॉट वाट इज द मीनिंग ऑफ दिस वर्ड।*'

एक ही खराबी है। मतलब एक बात इस सेवक की गड़बड़ है। यह हिंदी नहीं बोलता। जैसे ही कहो 'ओके गूगल' यह जाग जाता है। गुग्गू और आद्या को इसके साथ पढ़ने में मजा आने लगा है। ❑

-303, बीउए, अंसल एपीआई, क्रॉसिंग रिपब्लिक, गाजियाबाद, उ.प्र.-201009

जब भुल्लन चाचा खो गए

–प्रकाश मनु

दुनिया में कुछ लोग होते हैं जो एकदम बेमिसाल होते हैं। दीन-दुनिया से अलग। अपनी मिसाल खुद, जैसे हमारे प्यारे-प्यारे भुल्लन चाचा। आप दीया लेकर पूरी दुनिया घूम आइए। आपको कोई दूसरे भुल्लन चाचा नहीं मिलेंगे।

यों तो भुल्लन चाचा ठेठ गांव के हैं और हुल्लारीपुर गांव भी ऐसा है, जो बड़ी दूर-दूर तलक मशहूर है, वहां के लोगों के शरारती स्वभाव के कारण। सुना है, वहां लोग दूसरों को खूब बुद्धू बनाते हैं और इसमें उन्हें बड़ा मजा आता है। और कभी हुड़दंग मचाने पर आते हैं तो वो आफत कर डालते हैं कि भैया, धरती ऊपर, आसमान नीचे हो जाए। शायद इसीलिए तमाम लोगों ने उसका नाम न जाने कब से हुल्लारीपुर से हुड़दंगीपुर कर दिया है। और अब तो अगल-बगल के सभी गांवों के लोग उसे हुड़दंगीपुर के नाम से ही जानते हैं।

तो हमारे प्यारे भुल्लन चाचा भी इसी हुल्लारीपुर, यानी हुड़दंगीपुर के हैं। पर वे हुड़दंगीपुर के होकर भी इतने बुद्धू कैसे रह गए? समझ में नहीं आता।

पापा कहते हैं, 'अरे पागल, वे बुद्धू हैं नहीं, बुद्धू दिखते हैं। अंदर से तो उस्ताद हैं। और पूरे, पक्के जिद्दी। कुछ करने पर आ जाएं, तो किए बिना नहीं मानते।'

मैंने पापा की बातों पर गौर किया। यानी, बुद्धू दिखना अलग बात है, बुद्धू होना अलग। बात मुझे पूरी तरह तो नहीं, पर थोड़ी-थोड़ी समझ में आ गई।

शुरू में जब-जब तीज-त्योहारों पर मैं और गौरी दीदी मम्मी-पापा के साथ गांव जाते, तो भुल्लन चाचा से खूब मिलना होता था। तब उनकी बात-बात से हंसी टपकती... रस टपकता। और थोड़ा-थोड़ा बुद्धूपना भी। पर सच कहूं तो मुझे वे भा गए। हालांकि उन्हें अच्छी तरह जाना तब, जब वे हमारे सरोजिनी विहार वाले दिल्ली के घर में आए। इसी सरोजिनी विहार के मकान नंबर चार सौ सैंतीस, सेक्टर पंद्रह में ही तो हमारा घर है।

तब भी यही मकान था।... बात कोई पांच-साढ़े पांच साल पहले की है। तब भुल्लन चाचा गंवई माहौल से निकलकर थोड़ा शहर की हवा खाने के लिए हमारे घर आए और चार-छह महीने रहे थे।

तब हम छोटे-छोटे थे। मैं सात साल का और गौरी दीदी नौ साल की। भुल्लन चाचा भी कोई खास बड़े न थे। मुझसे हद से हद सात-आठ साल बड़े होंगे। गांव के थे और शुरू में शहर की तहजीब और तेजी से थोड़ा डरे-डरे भी रहते थे। उन्हें हमेशा लगता कि कहीं उनसे कोई ऐसी गलती न हो जाए, जिससे वे सारे लोगों के उपहास का पात्र बन जाएं। पर इस चक्कर में जरूर कुछ न कुछ गड़बड़झाला हो जाता था और भुल्लन चाचा को बुरी तरह झेंपना पड़ता। ऐसे में उनकी शक्ल एकदम भोंदू चाटवाले के दही-बड़े जैसी हो जाती थी। बस, देखने लायक।

यह वह ऐतिहासिक दौर था, जब भुल्लन चाचूजान के भुल्लन चाचा बनने की शुरुआत हो गई थी। और फिर तो धीरे-धीरे उनके आसपास इतने किस्से, किस्से और महा किस्से इकट्ठे होते गए कि कोई चाहे तो पूरी एक फिल्म बना ले। इनमें भुल्लन चाचा का किरदार थोड़ा-थोड़ा बदलता भी गया। पूरब से पश्चिम...! जैसे-जैसे उनकी मूंछों में ऐंठन आई, वे पूरे भुल्लन चाचा बनते चले गए।

खैर, इन दिनों हाल यह है कि मुझे भुल्लन चाचा की होशियारी वाले तमाम रंग याद आते हैं तो उनके बुद्धूपने के भी। तो चलिए, पहले बुद्धूपने वाला किस्से ही सुना दूं। पर देखिए, इस पर हंसना मना है, क्योंकि भुल्लन चाचा उन दिनों नए-नए ही तो दिल्ली शहर में आए थे और उनका गंवई रंग उतरा नहीं था। किसी से बोलते, बात करते समय वे थोड़ा-थोड़ा झेंपते से थे और निगाहें चुराते थे।

तभी फंस गए बेचारे दिल्ली की चक्करदानी में...!

उफ, बेचारे भुल्लन चाचा...!

हुआ यह कि भुल्लन चाचा को हमारे यहां आए कोई महीना भर ही हुआ था। अचानक एक दिन उनके दिल में आया कि बड़े दिन हो गए, जरा लंबी सैर कर आएं। और उन्होंने झट अपने नए वाले कत्थई जूते पहनने शुरू कर दिए। यों भी वे घुमक्कड़ी के शौकीन थे और जब उनकी घूमने की तबीयत हो, तो आप कितना ही जोर लगाएं, उन्हें घर में कैद करके नहीं रख सकते थे।

अलबत्ता पापा ने उन्हें समझाया कि ऐसी जिद ठीक नहीं, क्योंकि अकेले जाने पर खोने का खतरा है। शहर के एक छोर पर बसा सरोजिनी विहार। और सरोजिनी विहार के भी एक कोने में बसा

सेक्टर पंद्रह। फिर यहां का सबसे बड़ा चक्कर, बल्कि घनचक्कर यह था कि सारे मकान बिल्कुल एक जैसे थे। इसलिए नए-नए आए शख्स के लिए अपने घर को सही-सही पहचानना कठिन था। और यही थी पापा की सबसे बड़ी मुश्किल।

पर भुल्लन चाचा कैसे मान जाते यह बात? बोले, 'वाह भाई साहब, यह कैसे हो सकता है? मैं तो आज तक खोया नहीं।'

इस पर पापा ने फिर से समझाया, 'तुम्हें पता नहीं भुल्लन, दिल्ली पूरी भूल-भुलैया है। अरे, तुम क्या, खुद मैं चकरा जाता हूं कभी-कभी। जबकि मुझे पूरे बीस साल हो गए यहां रहते-रहते। अरे भाई मेरे, चलते-चलते एक गलत सड़क पकड़ ली, तो फिर आप कहां के कहां निकलोगे कोई नहीं जानता। और कोई आपकी मदद करने आएगा, यह तो सोचना भी मत...!'

पर भुल्लन नहीं माने तो आखिर में उन्होंने एक पते की बात बताई, 'बस, ठीक है भुल्लन, ठीक है। और अगर कहीं भूलो या भटको, तो बस, सरोजिनी विहार, सेक्टर पंद्रह, मकान नंबर चार सौ सैंतीस याद रखना ठीक से। वरना मुश्किल हो जाएगी।... समझ गए न!'

भुल्लन चाचा हंसकर बोले, 'हां-हां, ठीक है भाई साहब!... आप तो मुझे, लगता है, बच्चा समझते हैं। अरे, भूलूंगा कैसे? रास्ता तो मैं भूल ही नहीं सकता। मैं तो एक बार में ही रास्ता पहचान लेता हूं। फिर भूलने का इसलिए भी सवाल नहीं है कि मैं तो बस नाक की सीध में जाऊंगा और उसी तरह वापस आ जाऊंगा। एकदम तीर की तरह जाना, तीर की तरह आना।'

'और चाहो तो तुम निक्का को भी साथ लिए जाओ।' पापा ने सलाह दी।

'अरे, निक्का...! वह कहां चल पाएगा मेरे साथ? बेचारा थक-थका जाएगा। मैं अकेला ही हो आता हूं। बस यों गया और वो आया...!' कहकर भुल्लन चाचा तेज कदमों से चल पड़े और जैसा उन्होंने कहा था, ठीक वैसे ही। यानी एकदम नाक की सीध में।

दूर-दूर तक फैली सड़क का कोई आर-पार नहीं था और भुल्लन चाचा की तेजी का भी। सच में बड़ी तेज चाल चलते थे वे। हवा को मात करती चाल।

आसपास के लोग देखते तो जरा सकपका जाते। शहर में ऐसी बांकी चाल चलने वाला भला कौन आ गया, कहां से आ गया...?

और भुल्लन चाचा तो जैसे नशे में थे। चलने के आनंद का नशा। वे मजे में इधर-उधर देखते हुए अपनी रौ में चलते जा रहे थे, बस चलते ही जा रहे थे। आसपास का हर दृश्य उन्हें आकर्षित कर रहा था। बार-बार मन ही मन कह उठते, 'वव्वाह! देखो तो कैसी-कैसी बढ़िया-बढ़िया सड़कें हैं। आदमी फिसले तो एकदम फिसलता ही जाए।... बस, मजा ही आ गया।'

'और फिर, सड़क के चारों ओर कैसी बड़ी-बड़ी दुकानें, बड़े-बड़े बोर्ड... ऊंचे-ऊंचे बिजली के खंभे। और कारें...! इधर से उधर सर्र से दौड़तीं। लोग, मार तमाम लोग। हद है, भई, हद है...! सारी दुनिया क्या सड़क पर ही आ गई है? यहां शहर में क्या घरों में कोई नहीं रहता और...'

थोड़ा आगे जाकर दिमाग थोड़ा पलटा, जब उनका ध्यान इस बात की ओर गया कि अरे, यहां तो दूर-दूर तक हरियाली ही नहीं है। बीच-बीच में इक्का-दुक्का पेड़ हैं, मगर वे भी एकदम सूखे, मरियल से। या फिर लाल कनेर के छोटे-मोटे झाड़, जिनकी पत्तियां धुएं से काली हो रही हैं। फूल भी।... धत् तेरे की!

'हां, ये ही चीज गड़बड़ है इन शहरों में कि जिधर देखो, पत्थर ही पत्थर नजर आते हैं।

हरे-भरे पेड़ तो कम, बहुत ही कम हैं। बस, नाम लेने को।... अब बताओ तो भला, बगैर पेड़-पौधों के, हरियाली के, बंदा सांस कैसे लेगा? मालूम नहीं, इन शहराती लोगों को नींद कैसे आती है? कुछ-कुछ दम तो घुटता होगा।'

फिर चलते-चलते एक चौराहा आया तो सामने वाली सड़क के किनारे उन्हें रोज गार्डन का बोर्ड नजर आ गया। पीले रंग के बोर्ड पर ऊपर गुलाबी अक्षरों में 'रोज गार्डन' लिखा था। नीचे दमकता लाल सुर्ख गुलाब। साथ ही बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था, 'जवाहर वाटिका'।

देखकर भुल्लन चाचा का चेहरा खिल गया। सोचा, 'दिल्ली आए हैं तो रोज गार्डन तो देखना ही चाहिए। वरना कौन मान लेगा कि मैं दिल्ली आया भी हूं और यहां बाकायदे रह रहा हूं।'

भुल्लन चाचा ने थोड़ा उचककर कांटेदार चारदीवारी से झांका तो दिल बाग-बाग हो गया। मन ही मन बोले, 'वाह रे भुल्लन, वाह! इत्ते सारे रंग-रंग के गुलाब। तेरा तो जनम सार्थक हो गया रे! अरे देख तो, गुलाबों का मायालोक। कोई सुर्ख लाल, कोई गहरा गुलाबी, और कोई-कोई तो जामुनी भी। गुलाब ही गुलाब। यहां तक कि पीले और काले गुलाब भी नजर आ रहे हैं.. .वव्वाह! यह हुई न बात।'

उन्होंने इधर-उधर देखा, कहीं किसी से पूछने की दरकार तो नहीं है? शहर में तो सुना है, हर चीज पर टिकट है, हर चीज पर..! मगर फिर लोगों को बेरोक-टोक गार्डन में आते-जाते देखा, तो उनके साथ-साथ वे भी अंदर घुस गए। अंदर आकर गुलाबों की मीठी-मीठी रसभीनी खुशबू को नजदीक जाकर सूंघा तो मन चहक उठा। अहा, सारी सृष्टि की सुंदरता तो जैसे इन गुलाबों में ही सिमट गई है।

भुल्लन चाचा थोड़ा थक तो गए ही थे। सुंदर हरे-भरे पेड़ के सहारे बैठे तो हल्की नींद सी आ गई। नींद में सपना। उन्हें लगा, लाल गुलाबों और हरियाली का एक विशाल समंदर है और वे उसमें तैर रहे हैं, तैर रहे हैं, बस तैरते ही जा रहे हैं...

सपना सुंदर था और भुल्लन चाचा बड़ी दीवानगी से उसमें बहे जाते थे। पर अचानक पेड़ पर चिड़ियों की एक शरारती टोली की कैं-कैं, चौं-चौं शुरू हुई, तो अचकचाकर जागे। और तभी समय का खयाल आया। जरूर शाम के छह-साढ़े छह तो बज ही गए होंगे।...

अभी तक तो भुल्लन चाचा इस कदर हरियाली के आनंद में लीन थे, जैसे किसी और ही दुनिया में जा पहुंचे हों। अब एकाएक उन्हें ध्यान आया, 'अरे, लौटना भी तो है! भैया से तो कहकर आए थे, बस अभी यों तीर की तरह गया, और वो आया। पर... यहां तो सुंदर-सुंदर गुलाबों ने सच्ची, लुभा लिया।...'

खैर, भुल्लन चाचा ने रोज गार्डन से बाहर की ओर झांका। किधर जाएं?

पता चला, रोज गार्डन से बाहर आने के तीन या चार रास्ते हैं। अलग-अलग नाम वाले द्वार। यह रोज गार्डन है या भूलभुलैया...? अलबत्ता जो रास्ता उन्हें कुछ ज्यादा जाना-पहचाना लगा, उधर कदम बढ़ा दिए। और बड़ी तेजी से बाहर की ओर चल पड़े।

कहीं मकान खोजने में दिक्कत आई तो...? रोज गार्डन से बाहर निकलते हुए पहली बार उनके दिमाग में संशय का कीड़ा रेंगा। पर उन्होंने झट हंसकर उसे खदेड़ दिया, 'अरे ऐसा भी हो सकता है कभी....? महीने भर से तो वहीं रह रहा हूं। फिर ठेठ गांव का बंदा। एक बार जो गलियां और सड़क देख ली, उसे क्या भूल जाऊंगा इतनी जल्दी...? अंदर-बाहर का सारा नक्शा तो दिल-दिमाग में है।' और भुल्लन चाचा ने पैरों की गति और बढ़ा दी।

अब तक शाम गहराने लगी थी और अच्छा-खासा अंधेरा हो चुका था। सो भुल्लन चाचा मन

ही मन थोड़ा घबराए। वे रोज गार्डन से बाहर आ तो गए। पर आगे एक और मुश्किल। यह रोज गार्डन एक बड़े से चौराहे पर है। तो वे आए किधर से थे, जाना कहां है...।

भुल्लन चाचा को लगा, उनका दिमाग अब काम करना बंद कर रहा है। किसी तरह दिमाग खुजाकर उन्होंने हिसाब लगाना शुरू किया कि कौन-सी सड़क पर चला जाए? हालांकि मन अब भी निश्चिंत नहीं था। असल में उन्हें सड़क पर लगे हुए बड़े-बड़े बोर्डों का भरोसा था कि उन्हें देखते ही पहचान लेंगे। पर अब पता चला कि वे तो हर सड़क पर लगे हैं। तो पहचान कैसे हो कि वे किस सड़क से आए हैं और अब किधर लौटना चाहिए।

कुछ सोचकर और मन ही मन राम जी का नाम लेकर उन्होंने एक चौड़ी सी सड़क पकड़ ली। चाल तेज, खूब तेज। मन में रह-रह कर परेशानी की लहर सी पैदा हो रही थी, और वे चल रहे थे, चल रहे थे, बस चलते ही जा रहे थे। बार-बार उन्हें लगता, बस अभी घर पहुंचे, अभी...! बल्कि अभी-अभी उन्हें भैया की आवाज सुनाई दी थी कि 'अरे भुल्लन, तुम यहां...? मुझे लग रहा था, तुम जरूर भटक जाओगे, इसीलिए चला आया।... खैर, कोई बात नहीं, तुम घर के आसपास ही हो...!'

पर फिर समझ में आया, यह तो मन का भ्रम है।

कुछ आगे चलते ही भुल्लन चाचा एक ऐसे सुनसान इलाके में पहुंच गए कि जी घबराने लगा। रात घिरने के साथ-साथ सन्नाटा भी बढ़ता जा रहा था। भीतर का भी, बाहर का भी।... दूर से सीटियां मारता सन्नाटा और बीच-बीच में सर्र से दौड़ती कारें। कोई कार बगल से शूं... करती हुई गुजरती तो दिल बैठ सा जाता था। क्या जरूरत थी उन्हें इस दिल्ली शहर में अपनी बहादुरी दिखाने की...? अकेले ना ही घूमने आते तो क्या हो जाता?

भुल्लन चाचा मन ही मन अपने आप पर भुनभुना रहे थे। अंदर ही अंदर पछता भी रहे थे। घबराहट में उन्होंने और भी तेज कदम बढ़ाने शुरू कर दिए।

पर थोड़ी देर में ही असलियत भुल्लन चाचा के आगे आ गई। समझ गए कि जल्दी के चक्कर में वे शहर से और भी दूर चले आए हैं। अब तो वे बुरी तरह घबराए। लगा अभी यहीं चक्कर खाकर गिर जाएंगे। मारे घबराहट के वे एकदम पसीने-पसीने हो गए।

सरोजिनी विहार, मकान नंबर चार सौ सैंतीस! सेक्टर पंद्रह। उन्होंने हमारे घर का यह पता अच्छी तरह याद किया था, पर जाने क्यों इस समय उन्हें कुछ भी याद नहीं आ रहा था। और इस समय पूछें भी तो किससे पूछें, क्या पूछें....?

आखिर उन्हें बिज्जू की तरह डरा हुआ और बदहवास देखकर एक भला सा बूढ़ा आदमी मदद के लिए आगे आ गया। भुल्लन चाचा इस दयालु अजनबी से बस इतना ही कह पाए कि 'सरोजिनी विहार में हम रहते हैं। नीलू और गौरी हमारे भतीजे-भतीजी होते हैं। और...और मि. आनंद हमारे भाई...!'

'सो तो ठीक है। यह भी सरोजिनी विहार ही है, जहां तुम खड़े हो। पर सरोजिनी विहार में वे रहते कहां हैं...? किस जगह...!' उस बूढ़े आदमी ने पूछा। इतने में देखते ही देखते वहां आसपास खड़े कुछ और लोग आगे आ गए। 'भई, जाना कहां है?' लोगों ने पूछा।

अब भुल्लन चाचा भला इसका क्या जवाब दें? बोले, 'भाई, यह तो हमको नहीं पता। पर हमको जाना उनके घर है।'

सुनकर आसपास खड़े लोग हंसने लगे। बोले, 'पूरा पता नहीं मालूम, तो पहुंचोगे कैसे भाई?'

एक-दो लोगों ने दिलासा देते हुए कहा, 'देखो, तुम भटक गए हो तो चिंता न करो। हम तुम्हारे घर पहुंचा देंगे। पर भाई, घर का थोड़ा-बहुत पता तो होना ही चाहिए...।'

भुल्लन चाचा ने दिमाग पर जोर डालकर याद करने की कोशिश की। एकाएक उन्हें याद आ गया, 'मकान नंबर चार सौ सैंतीस...! हां, भाई जी, बस यही नंबर है हमारे भाईसाहब के घर का। तुम हमें वहीं पहुंचा दो।'

मकान नंबर याद आने से भुल्लन चाचा ने सोचा कि अब तो राहत मिल गई। बस, वे झटपट घर पहुंच जाएंगे। पर सुनने वालों को इससे जरा भी तसल्ली नहीं हुई। एक मूंछों वाले अधेड़ ने मूंछों में हंसते हुए कहा, 'मकान नंबर की बात तो ठीक है, पर सेक्टर...।'

'सेक्टर...? यह तो याद नहीं है।' भुल्लन चाचा धीरे से बुदबुदाए।

'तो फिर घर कैसे पहुंचोगे, भैया? जानते नहीं, यहां तो बहुत सारे सेक्टर हैं। हर सेक्टर में मकान नंबर चार सौ सैंतीस मिल जाएगा। तो फिर कैसे पहुंचोगे अपने भाई के घर... यह तो पता होना चाहिए कि तुम्हें किस सेक्टर के मकान नंबर चार सौ सैंतीस में जाना है...' उसी दयालु किस्म के बूढ़े आदमी ने समझाते हुए कहा, जिसने शुरू-शुरू में भुल्लन के कंधे पर हाथ रखकर दिलासा दिया था।

'यानी सरोजिनी विहार में चार सौ सैंतीस नंबर मकान बहुत सारे हैं...।' अब के भुल्लन चाचा चौंके।

'और का...?' साइकिल पर सवार एक नौजवान हंसा। वह मुंह में पान का बीड़ा दबाए था। खूब जोरों से दांत चमकाकर बोला, 'यह दिल्ली तो भूल-भुलैया है। तुम्हारा गांव थोड़े ही है, भाई!'

उसने कहा, 'क्यों बेटा, कोई और पहचान है उस जगह की, जहां घर है? जरा बताओ तो, याद करके!'

मगर अब पहचान क्या बताएं भुल्लन चाचा...? बहुत सोचकर बताया कि 'वहां से एकदम सीधी सड़क रोज गार्डन तक जाती है। हम उसी सीधी सड़क पर चल रहे थे कि जाने कब इधर-उधर निकल गए और भटक गए।'

'कितनी लंबी होगी वह सड़क?... मतलब, कितनी देर में रोज गार्डन पहुंचे थे।' उसी बूढ़े ने जानना चाहा।

'यही कोई घंटा भर समझो।... यानी कोई चार-पांच मील।' भुल्लन चाचा ने कुछ सोचते हुए कहा।

'बस-बस, अब अंदाजा लग जाएगा थोड़ा-बहुत।' उन बूढ़े सज्जन के चेहरे पर थोड़ी तसल्ली उभर आई।

'और कोई पहचान...?' पास खड़े एक नौजवान ने पूछा।

'वहां घर के पास स्कूल है। बहुत बड़ा स्कूल। वहां बाहर ही बहुत सारी बसें भी

खड़ी थीं स्कूल की। बिल्डिंग एकदम सफेद रंग की। पर... पर उसका नाम क्या है, याद नहीं आ रहा।... नहीं-नहीं, याद आ गया... याद आ गया, मीराबाई मॉडर्न पब्लिक स्कूल। यही नाम लिखा है ऊपर लाल-लाल बोर्ड पर।'

'अरे यार, कहीं तुम सेक्टर पंद्रह की बात तो नहीं कर रहे हो?' फिर उसी नौजवान ने जैसे किसी निष्कर्ष पर पहुंचते हुए कहा।

'अब पता नहीं, भाई। पर अब पहुंचा सको तो जल्दी पहुंचा दो, हमारे भैया, भाभी और नीलू और गौरी के पास...! और हां, मि. आर.के. आनंद है हमारे भैया का नाम...!' भुल्लन चाचा गिड़गिड़ाए।

बेंत वाले बूढ़े आदमी ने कहा, 'किसी के पास गाड़ी हो तो इसे घर तक छोड़ आओ। बड़ा पुन्न होगा।'

एक भला आदमी बोला, 'जरा रुको, मैं अभी घर से कार लेकर आया। सामने ही घर है मेरा।'

और उसके आते ही भुल्लन चाचा की जान में जान आई।

उस शख्स ने भुल्लन चाचा को कार में बैठाकर, कार सेक्टर पंद्रह की ओर मोड़ी, तब उन्हें समझ में आया कि वे तो एकदम उलटे ही जा रहे थे। ऐसे ही चलते रहते तो वे सुबह तक नहीं पहुंच सकते थे। उलटा, शहर के दूसरे ही छोर पर ही पहुंच जाते।

कार तेजी से दौड़ती जा रही थी, और भुल्लन चाचा बेचारे अपने आंसुओं को रोकने की असफल कोशिश कर रहे थे।

आखिर आ ही गया भुल्लन चाचा के बड़े भाईसाहब आर. के. आनंद का घर। वह घर जहां नीलू-गौरी थे, भुल्लन चाचा के भाई-भाभी और तमाम खुशियां। हालांकि घर के सामने पहुंचकर भी भुल्लन चाचा को यकीन नहीं हो रहा था कि वे सचमुच लौट आए हैं, अपने घर लौट आए हैं।

कॉलबेल बजाने पर अंदर से पहले नीलू निकला। 'अरे, भुल्लन चाचा...!' खुशी से भरी उसकी चीख सुनी तो घर के सारे प्राणी दौड़े।

सबके चेहरे पर विस्मय, 'अरे, भुल्लन चाचा लौट आए. .. भुल्लन चाचा लौट आए...! सच्ची-मुच्ची!'

आखिर भुल्लन चाचा को घर पर छोड़कर उस शख्स ने सारी कहानी सुनाई, तो घर में हर कोई हक्का-बक्का। पापा को तो शुरू में ही आशंका थी कि ऐसा होगा।

घर आकर भुल्लन चाचा की आंखों में आंसू। मुझे और गौरी दीदी को देखते ही उनका रोना छूट गया। बोले, 'भैया, हम तो खो गए थे।' कहते-कहते उनका गला भर आया।

मम्मी ने खूब पुचकारकर उनके आंसू पोंछे। बड़ी मुश्किल से भुल्लन चाचा को चुप कराया।

उसके बाद भुल्लन चाचा ने पानी पी-पीकर इस शहर को कोसना शुरू किया। बोले, 'यह तो बड़ा अजीब शहर है, भई। यहां अकेले मकान नंबर से काम नहीं चलता।'

सुनकर हम सबके चेहरे पर भी थोड़ी हंसी आई। भुल्लन चाचा की उदासी की परत कुछ तड़क सी गई। हालांकि बीच-बीच में रह-रहकर मार खाए चेहरे के साथ वह बोल पड़ते, 'हम तो सच्ची-मुच्ची खो गए थे, भैया...! लग रहा था, अब इस जनम में तो कभी वापस यहां आ नहीं पाएंगे। अजब है भाई, इस दिल्ली की लीला।...'

पहली बार भुल्लन चाचा की यह मासूमियत देख, हम सभी की बेसाख्ता हंसी छूटी। अलबत्ता वह रात भुल्लन चाचा की कैसे कटी, इसे न कभी वे भूल पाए और न मैं। और अब उम्मीद है, आप लोग भी न भूल पाएंगे। ❑

–545 सेक्टर-29, फरीदाबाद (हरियाणा), पिन-121008

योग का अंग आसन

भारतीय धर्म और दर्शन में योग का बहुत महत्व है। योग शारीरिक, मानसिक और अध्यात्म का विज्ञान है जिसे लगभग हर धर्म और संप्रदाय ने खुलकर स्वीकारा है। 11 दिसंबर, 2014 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने प्रत्येक वर्ष 21 जून को विश्व योग दिवस के रूप में मान्यता दी है।

–आचार्य कुमार शक्तिवेश

स्वजनो! मानव अपने जीवन के श्रेष्ठता के चरम पर योग के माध्यम से ही बढ़ सकता है। योग मात्र व्यायाम नहीं है। योग विज्ञान का चौथा आयाम या उससे भी बढ़कर है। यौगिक क्रियाओं से बच्चों हम वह भी पा सकते हैं जो प्रकृति ने हमें दिया तो जरूर है पर उनसे हम अनभिज्ञ हैं। प्रकृति और मानव शरीर के कितने ही रहस्य योग के माध्यम से अपना आकार लेते हैं, इसके लिए आवश्यक है कि हम योग की महत्ता और इसके नियम और प्रक्रियाओं को जानें और समझें क्योंकि योग प्रकृति और मानवीय संबंधों के परस्पर समन्वय पर ही आधारित है।

योग योगियों द्वारा स्वास्थ्य, मनोदशा और योग की विभिन्न स्थितियों में, शरीर के परे क्या है? यह जानने के प्रयत्नों के लिए किए गए प्रयोगों और कष्टों से विकसित हुआ है। योगी देखते, विश्लेषण करते और स्वयं को स्वस्थ करने के लिए इनका अनुकरण करते हैं। वे स्वस्थ होने के परे चले जाते हैं और रोग के कारण रोकथाम अपने-आप ही हो जाती है। यह कारणों और संभावनाओं का पता लगाता है, जिनके द्वारा शरीर को एक आदर्श कार्य करने की स्थिति में लाया जा सके।

स्वजनो! योग का तीसरा अंग 'आसन' या 'शारीरिक स्थिति' है। योग केवल आसनों का शारीरिक अभ्यास नहीं है, न ही आध्यात्मिक दर्शन अथवा धर्म। यह आदर्श मानव बनने का एक साधन है। यह शरीर से श्वास तक और श्वास से मस्तिष्क तक कार्य करता है और बाद में उच्च चेतना तक। योग वास्तविक सच है, यह व्यक्ति को चेतना के अधपके स्तर से उठाकर परमानंद तक ले जाता है।

आसन से स्थिरता, स्वास्थ्य तथा अंगों में हलकापन आता है। स्थिर और सुखकर शारीरिक स्थिति मानसिक संतुलन लाती है और मन की चंचलता को रोकती है। आसन शारीरिक व्यायाम मात्र नहीं है; वे शारीरिक स्थितियां हैं। उन्हें करने के लिए स्वच्छ हवादार जगह, एक कंबल और निश्चय (संकल्प) की आवश्यकता है जब कि शारीरिक शिक्षण की अन्य प्रणालियों के लिए विशाल मैदान

और कीमती उपकरणों की आवश्यकता होती है। आसन अकेले में किए जा सकते हैं; चूंकि शरीर के अंग आवश्यक भार और प्रतिभार देते हैं, व्यक्ति आसनों के अभ्यास से चपलता, संतुलन, धैर्य और महान चेतनत्व की वृद्धि करता है। शताब्दियों पूर्व शरीर की प्रत्येक मांसपेशी, नाड़ी और ग्रन्थि को प्रयोग में लाने के लिए आसनों का विकास हुआ। वे सुंदर शरीर की बनावट को सुरक्षित रखते हैं जो पुष्ट और मांसपेशियों के गठित हुए बिना भी लचीला होता है। वे शरीर को सभी प्रकार की बीमारियों से मुक्त रखते हैं। वे थकान मिटाते हैं और नाड़ियों की पीड़ा कम करते हैं। परंतु उनका वास्तविक महत्व इसमें है कि वे मन को साधते हैं और अधीन करते हैं।

अनेक अभिनेता, नट, पहलवान, नर्तक, संगीतकार और खिलाड़ी भी शरीर की बनावट (डील-डौल) उत्तम रखते हैं और शरीर पर उनका काफी नियंत्रण रहता है, फिर भी वे मन, बुद्धि और स्वयं पर नियंत्रण रखने में असमर्थ होते हैं। इसलिए वे स्वयं में बेसुरापन लिए होते हैं और उनमें से बिरला ही कोई संतुलित व्यक्तित्व रखता है। अन्य सभी बातों से वे शरीर को अधिक महत्व देते हैं। यद्यपि योगी शरीर को कम नहीं मानता, पर केवल उसके कार्य व्यापार का ही विचार नहीं करता अपितु वह अपनी इंद्रियां, मन, बुद्धि और आत्मा के बारे में भी विचार करता है। योगी आसनों के अभ्यास से शरीर पर विजय प्राप्त करता है और उसे आत्मा के योग्य साधन बनाता है। वह जानता है कि आत्मा के लिए यह आवश्यक साधन हैं। आत्मा शरीर के बिना उस पक्षी के समान है जिसे उड़ने की शक्ति से वंचित (किया गया) है। कुल 184 आसन हैं जिनमें से 84 आमतौर पर योगाचार्य प्रयोग करते हैं, बाकी विभिन्न रोगों से संबंधित हैं जो साधना और रोग निवारण में काम आते हैं।

आसनों के करने से योगी को सर्वप्रथम स्वास्थ्य लाभ प्राप्त होता है। स्वास्थ्य कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे पैसे देकर खरीदा जा सके। यह एक पूंजी है जो कठिन श्रम से ही प्राप्त की जाती है। यह शरीर, मन और आत्मा के वृक्ष संतुलन की अवस्था है। शारीरिक विस्मृति और मानसिक चेतना ही स्वास्थ्य है। आसनों के अभ्यास से शारीरिक असमर्थता और मानसिक बाधाओं से स्वयं को मुक्त किया जा सकता है। यह संसार की सेवा में परमात्मा को अपने कर्म और फलों को समर्पित करता है।

योग करने वाला व्यक्ति शरीर या मन की उपेक्षा कभी नहीं करता और न कभी उनका दमन ही करता हैं बल्कि वह उन दोनों को प्रोत्साहित करता है। शरीर उसके लिए न तो उसकी आत्ममुक्ति में बंधन है और न उसके पतन का कारण; बल्कि वह ज्ञानप्राप्ति का उपकरण है। वह ऐसा शरीर चाहता है जो वज्र की तरह कठिन हो, स्वस्थ हो, दु:ख रहित हो, जिससे परमात्मा की सेवा के लिए प्राप्त उस शरीर को वह उसे समर्पित कर सके। जैसा कि मुण्डकोपनिषद् में बतलाया गया है। व्यक्ति बिना शक्ति और बिना उद्देश्य के अनायास पूर्णत्व को प्राप्त नहीं हो सकता है। जिस प्रकार मिट्टी कच्चा घड़ा पानी में गल जाता है, उसी प्रकार शरीर शीघ्र ही क्षीण हो जाता है। इसलिए शरीर को शक्तिसंपन्न बन और उसे पवित्र करने के लिए योगनुशासन की अग्नि में तपाना आवश्यक है। आसनों के नाम अर्थपूर्ण हैं और विकास के तत्व को स्पष्ट करते हैं। कुछ आसानों के नाम वृक्ष (पेड़), पद्म (कमल) जैसे वनस्पति संबंधी हैं। कुछ के नाम शलभ (टिड्डी) और वृश्चिक (बिच्छू) जैसे कीड़ों पर कुछ के नाम मत्स्य (मछली), कूर्म (कछुआ), अथवा मकर (मगर) जैसे जलचर और अभयचर (स्थल एवं जल दोनों में रहने वाले) प्राणियों के नाम पर, कुछ आसनों के नाम कुक्कुट (मुर्गा), बक (बगुल) मयूर (मोर) और हंस जैसे पक्षियों के नाम पर आधारित हैं। कुछ के नाम श्वास (कुत्ता), वातायन (घोड़ा), उष्ट्र, (ऊंट) और सिंह जैसे चौपायों पर भी है। न तो जंग (सर्प) जैसे रेंगने वाले प्राणी भुलाए गए हैं और न मानव गर्भपिंड जैसी स्थिति छूटी (विस्मृत) है। वीरभद्र, पवनसुत हनुमान जैसे पौराणिक महापुरुषों के नाम पर आसन संबोधित हैं। भारद्वाज, कपिल, वसिष्ठ और विश्वामित्र के नाम पर आधारित होने के कारण आसनों के नाम में इसका स्मरण कर लिया जाता है। कुछ आसनों के नाम हिंदू मंदिरों के देवताओं के नाम पर हैं और कुछ अवतारों या दिव्य शक्ति के शरीर धारण के नाम पर आधारित हैं। आसन करते समय शरीर भिन्न-भिन्न प्राणियों के समान अनेक आकृति बनाता है। उसका मन किसी प्राणी से घृणा न करने में प्रशिक्षित है; कारण, वह जानता है कि सृष्टि के संपूर्ण विस्तार में, छोटे से छोटे कृमि से लेकर बड़े से बड़े अत्यंत पूर्ण साधु (महर्षि) तक, यही विश्वात्मा है, जो असंख्य रूपों को ग्रहण करता है, श्वास लेता है। वह जानता है कि निराकार रूप ही उसका सबसे महान रूप है। वह विश्वव्यापकता में एकता पाता है। सच्चा आसन वह है जिसमें साधक के मन में ब्रह्म का विचार सहज एवं निरंतर प्रवाहित होता रहता है।

आसनों पर अधिकार प्राप्त करने पर लाभ-हानि, जय-पराजय, यश-अपयश, शरीर-मन, मन-आत्मा इस प्रकार की द्वैत अवस्था नष्ट हो जाती है और तब साधक योगमार्ग की चौथी स्थिति प्राणायाम को पहुंचता है। प्राणायाम के अभ्यास में नासिकाएं, नासिका के मार्ग, झिल्लियां, वायुप्रणाली, फुफ्फुस और उर:प्राचीर, ये शरीर के अवयव ही सक्रियता से समाविष्ट किए जाते हैं। ये अकेले में जीवनश्वास प्राण के प्रभाव के पूर्ण समघात (टक्कर) का अनुभव करते हैं। इसलिए जल्दबाजी में प्राणायाम का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना (अधिकार प्राप्त करना) न सोचें। कारण आप इस प्रकार जीवन से ही खेल रहे हैं। इसके अनुचित अभ्यास से श्वास संबंधी रोग होंगे और नाड़ीमंडल अव्यवस्थित हो जाएगा। इसके समुचित अभ्यास से व्यक्ति अनेक रोगों से मुक्त किया जा सकता है। आप अकेले में स्वयं प्राणायाम का अभ्यास करने का प्रयास कदापि न करें। कारण, गुरु का व्यक्तिगत निरीक्षण अत्यंत आवश्यक है, जो अपने शिष्य की शारीरिक शक्ति को जानता है। ❑

–दिलशाद कॉलोनी, नई दिल्ली-95

वक्त के साथ दगाबाज़ी

–हरिवंशराय बच्चन

बापू की छाती की हर सांस तपस्या थी।
आती जाती हल करती एक समस्या थी।

और उस तपस्या का फल, बापू अवसर और पात्र के अनुरूप अपने सारे जीवन बांटते रहे। उनकी तपस्या का एक छोटा-सा प्रसाद पाने का अवसर मुझे भी प्राप्त हुआ था। यह बात असहयोग आंदोलन के समय की है। अवसर विशेष क्या था, इसकी मुझे याद नहीं। प्रयाग में कांग्रेस के बहुत से नेता आए हुए थे। आनंद भवन अतिथियों से भरा हुआ था। नेताओं की दैनिक सुविधाओं की देखरेख करने के लिए, एक स्वयंसेवक दल बना लिया गया था। जाड़े के दिन थे, एक बड़े बर्तन में पानी गर्म होता था और जब जिसको नहाने-धोने के लिए पानी की जरूरत होती थी, हम छोटी-छोटी बाल्टियों में भर, पहुंचा दिया करते थे। गांधीजी भी आनंद भवन में ठहरे थे। उनके नहाने के लिए गर्म पानी 11 बजे पहुंचाने का आदेश था। समय आ गया। पानी तो तैयार था ही। दुर्भाग्यवश हमारे पास समय एक ऐसी बाल्टी बची हुई थी जिसका हैंडिल निकल गया था। पानी तो हमने उसमें भर लिया, पर उसे उठाकर कैसे ले जाया जाए? इंतजार था कि कोई अच्छी बाल्टी खाली होकर आ जाए तो उसमें पानी ले जाएं। यह भी ध्यान था कि नहाने के लिए भी क्या कोई मुहूर्त होता है? दो-चार मिनट इधर-उधर ही हो गए तो क्या? ठीक ग्यारह बजे गांधीजी नहाने की तैयारी में बरामदे में आए। पानी तो उनके पास पहुंचा नहीं था। हमारी ओर उन्होंने देखा, समस्या भी समझ गए, मुस्कुराए और हमने देखा कि तेजी के साथ वे हमाम की ओर आ रहे हैं। बाल्टी के पास आते ही उन्होंने अपने दोनों हाथों से उसे उठा लिया और लेकर तीर की तरह, अपने नहाने के कमरे की ओर चले गए। जाते समय इतना कह गए-"जो काम जिस वक्त करना है करना, न करना वक्त के साथ दगाबाज़ी है।" यह सब इतनी जल्दी हो गया कि न हम से बन पड़ा कि खुद बाल्टी ले जाएं, न यह कि उस गर्म हुए बर्तन को उनसे छुड़ा लें। शायद भय भी था कि इस छीना-झपटी में कहीं गर्म पानी बाहर छलक कर हाथों को न जला दे। वे तो बस आए और बर्तन उठाकर चले ही गए। किसी तरह का उन्होंने मौका ही न दिया।

लेत चढ़ावत खेचत गाढ़े,
लखा न काहु रहे सब ठाढ़े।

बापू ने अपने समय पर स्नान किया। हम समय के साथ खेल कर सकते थे, पर बापू तो समय के साथ दगाबाज़ी नहीं

कर सकते थे। समय के साथ जो उन्होंने वादा किया था, उसको उन्होंने पूरा किया। उनका हाथ जल गया था। शाम को हमने देखा उनके अंगूठों और तर्जनी पर किसी सफेद किस्म की दवा लगी थी। समय की पाबंदी तो बहुतों ने सिखलाई, पर यह सबक अपना हाथ जलाकर केवल बापू ने सिखाया। और ऐसा सिखलाया कि जैसे अपना संदेश हृदय पर दाग दिया। मेरे और साथियों के ऊपर इसका क्या असर हुआ, मैं नहीं जानता पर मुझे उस दिन से प्रमाद नहीं व्यापा।

तब ते मोहि न व्यापी माया।

जब कभी ऐसा अवसर आया है कि किसी निश्चित समय पर कोई काम करना या पूरा करना है तो किसी बात या बहाने को बीच में लाकर उसे टालने या उसमें देरी करने को मेरा मन गंवारा नहीं कर पाया। मुझे बापू का जला हाथ याद आता है, और उनके शब्द मेरे कानों में गूंजने लगते हैं।

''जो काम जिस वक्त करना है, करना, न करना वक्त के साथ दगाबाज़ी है।''

उन दिनों बापू की हिंदी अच्छी नहीं थी, पर वे अपनी अटपट वाणी में ही अपना सारा आशय कह डालते थे। वे शब्दों में बोलते कहां थे, उनका हृदय बोलता था, उनका व्यक्तित्व बोलता था, उनकी साधना बोलती थी और उनके बोल हृदय में घुल जाते थे, कान बेकार खड़े रहते थे। मैं बहुत दिन यही समझता रहा कि ''वक्त के साथ दगाबाज़ी'' बापू की अटपटी हिंदी का एक नमूना है। पता नहीं वे क्या कहना चाहते थे और हिंदी में उनको यही शब्द सुलभ हो पाए। पर जब सोचता हूं बापू बिल्कुल यही कहना चाहते थे और जो वे कहना चाहते थे उसको दूसरे शब्दों में नहीं कहा जा सकता। एक शब्द एक मात्रा से कम में नहीं, ज्यादा में नहीं। बापू बनिए थे, अपने बनिएपन पर उन्हें गर्व था। शायद शब्दों के मामले में वे सबसे अधिक बनिए थे। तोल कर बोलते थे। न जरूरत से ज्यादा न जरूरत से कम। और हर शब्द सच्चा, खरा, यथार्थ भरा। ❑

–प्रकाशन विभाग की पुस्तक 'गांधीजी के संस्मरण' से साभार

प्राण रक्षक

–रमेश तैलंग

सन् 1940 दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो चुका था और इस युद्ध में फ्रांस की जर्मनी से हार हो चुकी थी। जर्मनी के नाजी सैनिक फ्रांस में बसे यहूदी लोगों को खोज-खोज कर या तो मार रहे थे या फिर युद्ध-बंदी बनाकर उन्हें जर्मनी के यातना शिविरों में भेज रहे थे। इन्हीं बंदियों में से एक था ज्योर्जेस लोइंगर।

ज्योर्जेस लोइंगर का जन्म फ्रांस में स्ट्रौसबर्ग शहर के एक रूढ़िवादी यहूदी परिवार में हुआ था। कदकाठी में अच्छा-खासा बलशाली, नीली आंखों वाला लोइंगर फ्रांस की सेना की ओर से जर्मनी के विरुद्ध लड़ा था और जब फ्रांस की इस युद्ध में हार हो गई तो अन्य युद्धबंदियों की तरह उसे भी जर्मनी के एक युद्धबंदी शिविर में भेज दिया गया।

लोइंगर था तो यहूदी लेकिन अपने सुनहरे बालों और अलग तरह के नाक-नक्श के कारण वह कहीं से यहूदी नहीं दिखता था। जर्मन भाषा भी वह फर्राटे के साथ बोलता था। इसलिए जर्मन सैनिक भी उसके यहूदी न होने का धोखा खा जाते थे और उस पर ज्यादा निगरानी नहीं रखते थे। नाजी सैनिकों की इसी लापरवाही का फायदा उठाकर एक दिन लोइंगर अपने युद्धबंदी शिविर से भाग निकला और छुपते-छुपाते वापस फ्रांस जा पहुंचा।

उस समय फ्रांस में ओएसई नाम की एक सहायता संस्था काम कर रही थी जो अपने ढंग से

यहूदी बच्चों को नाजी सैनिकों की नजरों से बचाकर शरण देने का काम कर रही थी। फ्रांस वापस आकर लोइंगर इसी ओएसई संस्था से जुड़ गया।

लोइंगर की कार्यशैली से प्रभावित हो कर ओएसई संस्था ने उसे एक खतरनाक काम सौंपा और यह काम था संस्था में शरण लिए बच्चों को किसी तरह फ्रांस की सीमा से जुड़े स्विट्जरलैंड की सीमा के अंदर पहुंचा देना।

स्विट्जरलैंड उस समय एक तटस्थ देश था। उसने अलग-अलग युद्धदेशों के किसी भी समूह से न जुड़कर युद्ध में भाग न लेने का फैसला किया था। इसीलिए फ्रांस के यहूदी बच्चों के लिए स्विट्जरलैंड ही सबसे बड़ी सुरक्षित जगह थी। लेकिन लोइंगर के लिए यहूदी बच्चों को नाज़ी सैनिकों की नज़र बचाकर स्विट्जरलैंड की सीमा में प्रवेश करा देना इतना आसान नहीं था। इस काम में स्वयं उसकी तथा बच्चों की जान जाने का हमेशा खतरा था। फिर भी लोइंगर अपनी सूझ-बूझ, साहस और कौशल से इस काम को करने के लिए तैयार हो गया था।

फ्रांस की ओएसई संस्था के साथ बच्चों की शारीरिक शिक्षा के प्रशिक्षक के रूप में जुड़ने के बाद लोइंगर ने एक अजीबोगरीब खेल शुरू करने की योजना बनाई। स्विट्जरलैंड की सीमा पर वह एक फुटबॉल पिच देख चुका था। इस पिच पर कोई ज्यादा निगरानी नहीं रखता था इसलिए स्विट्जरलैंड की सीमा पर बने इस पिच पर वह यहूदी बच्चों को रात के वक्त फुटबॉल खिलाने के लिए ले जाने लगा। पिच पर दो ढाई मीटर लंबी लोहे के तारों की बाड़ जरूर थी लेकिन उससे कोई ज्यादा परेशानी नहीं होने वाली थी। जब बच्चे वहां खेलने के लिए जुड़ जाते तो लोइंगर फुटबॉल को किक मार 100 मीटर की दूरी तक फेंक देता और बच्चों को बाड़ ऊपर उठाकर बॉल पकड़ने के लिए दौड़ा देता। जब यह खेल शुरू होता तो स्विट्जरलैंड सीमा पर मौजूद रक्षक भी प्रतिरोध नहीं करते थे और लोइंगर की सहायता करते हुए उन बच्चों को अपनी सीमा में सुरक्षित प्रवेश दे देते। इस खेल के जरिए लोइंगर ने सैंकड़ों यहूदी बच्चों को स्विट्जरलैंड की सीमा में भेज कर उनकी जान बचाई।

इस खेल को खिलाते हुए लोइंगर ने इस बात का भरपूर ध्यान रखा कि बच्चों को उन के

आसपास मंडरा रहे खतरे की जरा भी भनक नहीं लगे और वे इस खेल को बड़े ही मजे के साथ निडर हो कर खेलें। इस खेल में अगर कोई सबसे मुश्किल काम था तो वह था ओ एस ई संस्था के अलग-अलग शरणस्थलों से बच्चों को स्विट्जरलैंड की सीमा तक लाना। फिर भी खतरों की परवाह न कर लोइंगर ने इस खेल को एक बार नहीं, कई बार खेला और किसी को भी उसकी योजना का पता नहीं चला।

लोइंगर की सबसे बड़ी खूबी यही थी कि वह अपनी हर योजना को बड़ी ही सावधानी से अंजाम देता था। एक बार की बात है, वह कुछ बच्चों को ट्रेन के द्वारा एक्सलेसबइंस से एननेमस नाम के गांव में ला रहा था। यह गांव जेनेवा की सीमा के पास था। ट्रेन के उस कोच में जर्मन सेना के सैनिक भी थे। गलती से अगर किसी को भी लोइंगर की इस योजना की जरा सी भनक लग जाती तो बहुत बड़ा खतरा पैदा हो सकता था। इसलिए लोइंगर ने ट्रेन यात्रा पर जाने से पहले सभी बच्चों के नकली पहचान पत्र बनवा रखे थे और उन्हें कड़ी चेतावनी भी दे रखी थी कि वे किसी भी सैनिक से न तो ज्यादा बात करें और न ही उन्हें अपने असली नाम बताएं। बच्चों ने पूरी यात्रा के दौरान लोइंगर की इन हिदायतों का पूरी तरह पालन किया और किसी को भी उन पर कोई संदेह नहीं हुआ।

एननेमस गांव में ऐसे कई लोग थे जो फ्रांसीसी प्रतिरोध नाम के आंदोलन से जुड़े हुए थे और लोइंगर के इस मानवीय काम में मदद देने को तैयार थे। इन लोगों की मदद से लोइंगर ने एक और गुप्त योजना पर काम शुरू किया। इस योजना के अनुसार, वह बच्चों को शोक-प्रकट करने वालों की तरह मुंह तक ढके काले वस्त्र पहना कर उन कब्रगाहों पर ले जाता जो फ्रांस और स्विट्जरलैंड की सीमा के बिलकुल नजदीक थे। बच्चे अपने हाथों में पुष्पहार लिए रोते-बिलखते हुए कब्रगाहों तक जाते और कुछ देर ही में उन्हें कब्र खोदने वालों की सीढ़ियों के जरिए गुपचुप ढंग से चढ़ा कर दूसरी ओर स्विट्जरलैंड की सीमा के अंदर सुरक्षित पहुंचा दिया जाता। इस तरह लोइंगर ने लगभग 400 यहूदी बच्चों को नाजी सैनिकों की नजरों से बचाकर तटस्थ देश स्विट्जरलैंड की सीमा के अंदर पहुंचाया और उनकी जान बचाई।

युद्ध खत्म होने के बाद जब फ्रांस को जर्मनी के अत्याचारी नाजी-शासन से मुक्ति मिली तो फ्रांस तथा विश्व के अन्य देश के लोगों ने ज्योर्जेस लोइंगर नामक इस अद्भुत साहसी यहूदी व्यक्ति को बहुत ही सम्मान के साथ याद किया। सरकारी तौर पर भी लोइंगर को उनके महान कार्य के लिए कई बार सम्मानित किया गया।

सन् 2005 में फ्रांस सरकार ने लोइंगर को कमांडर ऑफ द मिलिटरी लीजन ऑफ ऑनर के अलंकरण से सम्मानित किया। इसके अलावा उन्हें मेडल ऑफ रेजिस्टन्स, द मिलिटरी क्रॉस, और फ्रांस सरकार की नेशनल एजुकेशन यूथ एवं स्पोर्ट्स मिनिस्टरी के गोल्ड मेडल से भी नवाजा गया। यही नहीं, जुलाई 2016 में लोइंगर को फेडरल रिपब्लिक ऑफ जर्मनी के ऑर्डर ऑफ मेरिट में एक अधिकारी के रूप में भी नियुक्त किया गया।

कुल मिलाकर लोइंगर ने अपना शेष जीवन बहुत ही मान-सम्मान के साथ जिया। संकट के समय यहूदी बच्चों के लिए तो वह एक मसीहा ही बन कर आया।

पिछले वर्ष लगभग 108 वर्ष की आयु में ज्योर्जेस लोइंगर नामक फ्रांस के इस साहसी सपूत का निधन हो गया। ❑

-ई-403, प्रिंस अपार्टमेंट, पटपड़गंज, नई दिल्ली-110092

मचा शोर, देखा चोर

–वर्षा दास

"उठो इला, सात बज गए हैं।"

उकड़ू सोई हुई इला ने बिस्तर में पैर पसारे और बोली, "इतनी जल्दी? आज तो छुट्टी है।"

मां ने इला के सिर पर प्यार से हाथ फेरा और कहा, "रविवार कल था। आज तो सोमवार है।"

"ओह सोमवार! आज तो कविता-पाठ का दिन है।" इला एकदम से खड़ी हुई और बाथरूम की ओर दौड़ी।

मां ने इला के लिए फटाफट मुट्ठी भर पोहा धोया। उसमें गर्म-गर्म दूध मिलाया। गुड़ के छोटे-छोटे टुकड़े करके उसमें डाले। इला रोज सुबह नहाकर यही खाकर स्कूल जाती है।

जब वह दूध-पोहा खा रही थी तब मां ने पूछा, "कविता-पाठ में क्या करना होता है?"

इला ने चम्मच में दूध-पोहा लेकर मुंह में डाला और बोली, "उसमें हम... खों खों खों" वह खांसने लगी। मां समझ गई कि गले में थोड़ा-सा दूध गलत रास्ते चला गया है। उसने कहा, "इला, ऊपर देखो।" इला ने ऊपर देखा और खांसी रुक गई। अरे! यह कैसा जादू हुआ?

मां हंसते हुए बोलीं, "जब मैं छोटी थी तब कुछ खाते या पीते समय बोलती थी तो मैं भी खांसने लगती थी। तब मेरी मां, यानी तुम्हारी नानीमां मुझे कहती थीं, "देखो ऊपर सोने की चिड़िया उड़ रही है! मैं ऊपर देखती थी और खांसी बंद हो जाती थी!"

"सोने की चिड़िया और खांसी, इनका एक-दूसरे से क्या लेना-देना?" इला हमेशा हर चीज का कारण जानना चाहती थी।

तब मां ने समझाया, "दूध-पोहा अन्ननली में जाने के बजाय सांस की नली में चला गया। दोनों नलियां गले में ही तो होती हैं। जब हम ऊपर देखते हैं तो सांस की नली थोड़ी चौड़ी हो जाती है। वहां जो फंसा हो वह निकल जाता है। इसीलिए जब मुंह में खाना हो तब बोलते नहीं हैं। वैसी मेरी ही गलती है। मैंने ही कविता-पाठ के बारे में सवाल पूछ डाला!"

"स्कूल में जब खाने की छुट्टी होती है, हम अपना-अपना डिब्बा खोलकर खाते है, बातें भी

करते हैं, और खांसी आ जाए तो पानी पी लेते हैं। अब मैं सभी दोस्तों को बता दूंगी कि मुंह में खाना हो तब बोलना नहीं, सोने की चिड़िया देखनी पड़ेगी।'' मां-बेटी जोर से हंस पड़ीं।

इला जूते पहन रही थी तब मां ने फिर से पूछा, ''कविता-पाठ में तुम बड़े-बड़े कवियों की कविता पढ़ते हो या खुद भी कविता लिखते हो।''

''कोई खुद कविता लिखता है, कोई दूसरों की पढ़ता है, तो कोई किसी की कविता का अनुवाद करके भी पढ़ता है।''

''अरे वाह! तुम क्या करने वाली हो?''

''मैंने एक गुजराती कविता का हिंदी में अनुवाद किया है, वही पढ़ने वाली हूं।'' इला गर्व से बोली।

''अच्छा! मुझे तो सुनाओ। मेरी दस साल की बिटिया कविता का अनुवाद भी कर लेती है।''

''स्कूल से लौट कर आऊंगी तब सुनाऊंगी। देखो, मेरी बस आने वाली होगी।''

इला दौड़कर घर से निकल गई।

इला कब से कविता-पाठ का इंतजार कर रही थी। मन-ही-मन बड़ी खुश हो रही थी। आखिर अमीना दीदी आ ही गईं। वह उनको हिंदी पढ़ाती थीं।

क्लास में आते ही अमीना दीदी ने पूछा, ''आज तो कविता-पाठ का दिन है। याद है ना?''

पूरी क्लास के बच्चे एक साथ बोल उठे, ''हां दीदी।''

''तो आज कौन-कौन कविता सुनाएंगे?''

इला ने झट से हाथ खड़ा किया। और बच्चों ने भी हाथ ऊपर किए थे, लेकिन इला के चेहरे पर उत्साह देखकर दीदी बोली, ''आज के कविता-पाठ की शुरुआत इला करेगी।'' और उन्होंने इला को अपने पास बुला लिया।

इला अपनी कॉपी लेकर अमीना दीदी के पास जाकर खड़ी हो गई।

दीदी ने पूछा, ''यह कविता तुमने लिखी है?''

इला बोली, ''नहीं। ये दलपतराम नामक एक मशहूर गुजराती कवि की कविता है। मैंने उसका हिंदी में अनुवाद किया है।''

''शाबाश! तुम गुजराती भाषा भी पढ़ लेती हो?'' दीदी ने पूछा।

इला अपनी आवाज जरा

ऊंची करके जोश से बोली, ''मेरी मां गुजराती हैं। हम लोग घर में गुजराती भी बोलते हैं।''

अमीना दीदी यह सुनकर बहुत खुश हुईं। उन्होंने कहा, ''यही तो हमारे भारत देश की खूबी है। चलो इला, अब तुम कवि दलपतराम की कविता का हिंदी अनुवाद सुनाओ।''

इला ने पढ़ना शुरू किया :

''हवा बही तो
खपरैल खिसका,
उसे देखकर
कुत्ता भौंका,
इतने में तो
मच गया शोर,
कोई बोला, ''मैंने
देखा चोर!''

यह सुनकर दीदी ने ताली बजाई। पूरी क्लास के बच्चों ने भी तालियां बजाईं। इला तो खुश-खुश।

दीदी बोलीं, ''इला, यह कोई साधारण कविता नहीं है। इसमें एक बहुत बढ़िया बात कही गई है। मैं समझाती हूं।''

इला की कॉपी अपने हाथ में लेकर अमीना दीदी बोलीं, ''वहां कोई चोर तो था ही नहीं। जब तेज हवा चलती है तो खपरैल खिसक जाते हैं। पास में आराम से बैठा हुआ कुत्ता खपरैल के खिसकने की आवाज से चौकन्ना हो गया और भौंकने लगा। कुत्ता भौंका तो लोग इकट्ठे हो गए। इतने में किसी ने यूं ही गप्प मारी कि उसने चोर को देखा! और फिर तो सारे लोग ''चोर चोर, पकड़ो-पकड़ो चिल्लाने लगे होंगे।''

सभी हंस पड़े। इला भी खूब हंसी। उसकी कविता सब को इतनी पसंद आ जाएगी, यह तो उसने सोचा ही नहीं था। इतना ही नहीं, अमीना दीदी ने उस कविता की खूबियां समझाईं तब पता चला कि एक जने ने गप्प उड़ाई तो सारा गांव उसे सच मान बैठा!

गप्प की भी क्या ताकत होती है! आंधी की तरह फैलती है। और बहुत कुछ उड़ा ले जाती है! ❑

-2176 पार्क व्यू अपार्टमेंट, बी-2, वसंत कुंज नई दिल्ली-110070

गर्मी की छुट्टी

-प्रमोद लायटू

बीत गई गर्मी की छुट्टी।
टूटी स्कूलों से कुट्टी।।

फिर से बस्ते लगे हैं सजने।
'स्कूल वैन' के हॉर्न हैं बजने।।

अब आलस से काम न होगा।
पहले सा आराम न होगा।।

नहीं चलेगी कोई ढ़िलाई।
करनी होगी खूब पढ़ाई।।

मां जल्दी हर रोज़ उठाती।
बड़े प्यार से सदा जगाती।।

यही सोचता 'क्या हो गई भूल।
हे भगवान आज फिर स्कूल'।।

मन करता स्कूल न जाऊं।
घर पर रहकर मौज मनाऊं।।

लेकिन फिर आता यह ध्यान।
शिक्षा बिना हैं पशु समान।।

बिन शिक्षा भी क्या है जीवन।
जैसे फूलों बिना हो उपवन।।

पढ़ने-लिखने से क्या डरना।
जीवन में आलस मत करना।।

-'कृष्ण जगत' 48 एफ, पॉकेट-4, मयूर विहार-1, दिल्ली-110091

संतुलन

–उषा यादव

वार्षिक परीक्षा हो गई। परीक्षाफल भी निकल गया। अब आज से गर्मी की छुट्टियां हैं।

छुट्टियां, यानी फुरसत के दिन।

लंबे ग्रीष्मावकाश में पापा के साथ घर जाते समय भाव्या खुशी से फूली नहीं समा रही थी। साल भर पहले पापा ही उसे गांव से लाकर शहर के गर्ल्स स्कूल के हॉस्टल छोड़ गए थे। शुरू के कुछ दिन यहां वह काफी उदास रही। बार-बार घर याद आता। गांव याद आता। गांव के बाग-बगीचे, ताल-पोखर और खेत-खलिहान याद आते। सबसे बढ़कर, उसे अपनी वे सहेलियां याद आतीं, जिनके साथ घंटों ऊधमबाजी करके भी वह नहीं थकती थी।

फिर धीरे-धीरे उसका मन हॉस्टल और विद्यालय की अपनी नई जिंदगी में रमने लगा। यहां शहर में भव्य मॉल्स थे, शानदार होटल-रेस्तरां थे, कंप्यूटर और मोबाइल की जादुई-तिलस्मी दुनिया थी। और हां! अफसरों-व्यापारियों के घर की तनिक घमंडी किस्म की अमीर लड़कियों का संग-साथ भी था।

साल कब बीत गया, पता नहीं चला।

अब गर्मी की छुट्टियों में घर लौटते समय भाव्या बहुत खुश

थी। नवीं कक्षा के सभी सेक्शन में सबको पछाड़कर पहली रैंक पाना कोई छोटी सफलता थी क्या?

गांव पहुंची, तो उसके आने की सूचना पाकर सबसे पहले सहेलियां दौड़ी चली आईं। तारा,

रज्जो, सीमा और सपना। सबकी आंखें खुशी से चमक रही थीं, मुस्कराहट छिपाये नहीं छिप रही थी।

"कैसी हो, भाव्या?" सबने ललककर एक साथ पूछा।

"अच्छी हूं।...... तुम लोग कैसी हो?" वह ठंडी आवाज में बोली।

"हम भी अच्छे हैं। लेकिन तुम्हारी कमी पूरे साल खली। सच में तुम्हारी बहुत याद आती थी।" कहते-कहते सपना की आंखें भर आईं।

पर भाव्या चुप रही। तनिक अनमनी जरूर हो उठी थी।

सहेलियां मिनट भर खड़ी रहीं। फिर यह कहकर लौट गईं, "भाव्या, अभी तुम थकी आई हो। आराम करो। हम लोग शाम को मिलेंगे।"

उसने सिर्फ सिर हिला दिया।

उसने स्वयं यह महसूस किया कि सहेलियों के साथ दिल खोलकर नहीं मिल सकी है वह, व्यवहार में एक दूरी आ गई है।

पर इस बारे में ज्यादा सोचने का वक्त न था। मां और दादी ने भीतर से आकर उसे बांहों में बांध लिया था। कितना कुछ लगातार पूछती जा रही थीं।

उसने इतराकर सिर्फ इतना बताया, "*फर्स्ट* आई हूं मैं। पूरी नवीं कक्षा में *टॉप* किया है। देखना दादी, आप लोगों का सपना एक दिन जरूर पूरा करूंगी। आई.ए.एस. अधिकारी बनकर दिखाऊंगी।"

दादी ने मुस्कुराकर उसका माथा चूम लिया।

मां ने रीझकर नजर उतारी और कहा, "चल बिटिया, कुछ खा-पी ले। दोपहर होने को आई, भूख लग गई होगी।"

पर भोजन की थाली देखकर भाव्या कुढ़ गई। उहं! यह भी कोई भोजन है! दाल-चावल-रोटी, काशीफल की सब्जी और लौकी का रायता। लगता है, अस्पताल में किसी मरीज के लिए खाना आया है।

सचमुच थाली देखकर उसकी भूख खत्म हो गई थी। मुंह लटकाकर बोली, "मां, यह खाना मुझसे नहीं खाया जाएगा। कुछ और बना सकती हो तो बना दो, वरना..."

"मेरी राजहंसिनी क्या मोती चुगकर जीती है अब?" दादी ममता से हंसी, "दाल-रोटी नहीं खाओगी, तो क्या पसंद है?"

"दादी, आप समझने की कोशिश कीजिए।" वह गंभीर हो उठी, "हम लोग मेस का खाना अक्सर गोल कर देते हैं। 'वैशाली' में लंच लेना मेरी सहेलियों को पसंद है। वहां पिज्जा की ही इतनी *वेराइटी* होती हैं कि नाम सुनकर जी खुश हो जाता है।"

दादी कुछ न बोलीं।

उसने और ज्यादा गंभीर होकर मां की तरफ देखा, "ब्रेड रखी है फ्रिज में? सैंडविच बना सकोगी मेरे लिए?"

मां ने लाचार भाव से सिर झुका लिया, "देखो, कोशिश करती हूं। तुम्हें भूखी तो नहीं रख सकूंगी, बिटिया।"

भाव्या उसी वक्त समझ गई कि छुट्टियों में घर आने का सारा मजा किरकिरा हो चुका है। उसे यहां अब सिर्फ दिन काटने हैं। जुलाई में स्कूल खुलने का इंतजार भर करना है।

चेहरा तो मां और दादी का भी उतर गया था। सिर्फ एक साल में उन्हें अपनी जानी-पहचानी बेटी अनजानी जो लगने लगी थी।

और यह भाव्या के गांव आने का पहला दिन था।

अगले दिन सुबह होते ही वह तमतमाई हुई अपने बिस्तर से उठी। मां के पास जाकर झुंझलाई आवाज में बोली, "क्या यहां यही सब झेलना पड़ेगा?"

"क्या मतलब?" मां चौंक गईं।

"आधी रात से ही दादी ने पूजा की घंटी टनटनानी शुरू कर दी है। मेरी मीठी नींद का सत्यानाश हो गया।"

"बिटिया, घड़ी देखो। छः बज चुके हैं। भूल गईं, तुम्हारी

दादी हमेशा इसी वक्त पूजा करती हैं?'' मां ने तनिक सख्त आवाज में कहा।

''ऐसा है मां, न हो तो दादी को कुछ दिनों के लिए चाचा के यहां भेज दो।'' भाव्या ने फैसला सुना दिया।

''क्यों?''

''क्योंकि हम लोग- हॉस्टल में रात के बारह-एक बजे तक धमाल मचाते हैं। फिर सुबह आठ बजे तक घोड़े बेचकर सोते हैं। भागते-दौड़ते तो जैसे-तैसे फाटक बंद होने से पहले स्कूल पहुंच पाते हैं। इस आदत को बदलना मेरे लिए संभव नहीं है।''

मां चुपचाप सुनती रहीं।

भाव्या तनिक ऐंठी, ''देखा नहीं था तुमने, रात को बारह बजे तक मैंने लैपटॉप पर काम किया है। सोते-सोते एक बज गया था।''

''आज से दिन में काम करना और रात को ठीक दस बजे सो जाना।'' मां का इतना कहना भाव्या के तन-बदन में आग लगा गया। उसने घूरकर उनकी तरफ देखा और पांव पटकती हुई वहां से चली गई।

मां समझ नहीं पाईं कि इस लड़की का यह मनमाना तौर-तरीका क्या छुट्टियों भर इसी तरह चलेगा?

पर यह सच था।

एक कड़वा सच।

हर बात में भाव्या का नकचढ़ापन देखकर पूरा घर परेशान तो था, पर कोई कुछ कर नहीं पा रहा था। गांव की पुरानी सहेलियों में इस लड़की की कोई रुचि नहीं रह गई थीं। वे आतीं और उपेक्षा पाकर लौट जातीं। दो-चार दिन बाद सबने आना ही बंद कर दिया।

पर सिर्फ सहेलियां न थीं। गांव की हर चाची-ताई छुट्टियों में घर आई बिटिया से मिलना चाहती थी। उधर भाव्या को इन गंवारिनों की बातें तो क्या, शक्ल तक नापसंद थी। मां से उसने साफ शब्दों में कह दिया, ''मेरे कमरे का दरवाजा भेड़ दो। कोई आए और मुझे बुलाए, तो मना कर देना।''

''क्या कहूं उन लोगों से?'' दादी एक दिन चिढ़ गईं, ''बिटिया शहर जाकर अंग्रेज हो गई है। देसी बोली-बानी भूल गई है। सिर्फ अंग्रेजी में गिटपिटाने वाली सहेलियों से उसका नाता रह गया है।''

''आपकी इच्छा। जो चाहें, वह कहें। पर *प्लीज़*, मुझे *डिस्टर्ब* न करें।'' भाव्या ने बड़ी नाटकीय मुद्रा में हाथ जोड़ दिए।

''कमरे का एक कोना पकड़कर अकेली बैठे रहने का आखिर मतलब क्या है? समाज से इस तरह कट क्यों गई हो तुम?'' दादी का गुस्सा थमने में नहीं आ रहा था।

भाव्या झुंझला गई, ''मैं अकेली बैठना पसंद करती हूं, मेरी इच्छा! पर समाज से कट गई हूं, यह आपसे किसने कहा? मेरी *फ्रेन्ड्स* का एक बड़ा समूह है। मैं हर वक्त उनसे जुड़ी रहती हूं। *मैसेज* है, *वाट्स ऐप* से *फोटो शेयर* करना है, *चैटिंग* है... यकीन मानिए, सहेलियों की एक भरी-पूरी दुनिया मेरे इर्द-गिर्द हमेशा मौजूद रहती है।''

दादी जैसे सदमे में आ गईं।

एक ठंडी सांस भरकर चुपचाप वहां से हट गईं।

और रोज की इसी किच-किच में छुट्टियां कब खत्म हो गईं, कोई जान न सका।

पर असली भूचाल आना अभी बाकी था।

भाव्या को हॉस्टल जाने की तैयारी करता देखकर पापा ने अचानक आदेश सुना दिया, ''तुम अब कहीं नहीं जाओगी। यहीं गांव के इंटर कॉलेज में तुम्हें आगे पढ़ाई करनी है।''

''क्या मतलब?'' भाव्या एकदम अपना आपा खो बैठी, ''मुझे शहर नहीं भेजा जाएगा?... लेकिन क्यों?''

''क्योंकि हमने तुम्हें नया ज्ञान-विज्ञान सीखने के लिए हॉस्टल जरूर भेजा था, पर पुराना पाठ भूल जाने को नहीं कहा था। मुझे बहुत खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि नया सीखने की

धुन में तुम अपनी इतने सालों की यहां की पढ़ाई भूल गई हो, अपना घर-संस्कार सब भूल गई हो।''

''ऐं!'' भाव्या कुछ समझी नहीं।

''शांति से मेरी बात सुनो।'' कहते हुए मां आगे बढ़ आईं, ''इस एक साल में तुम एकदम बदल गई हो। तुमने अपनी पुरानी सहेलियों से नाता तोड़ लिया है। गांव के बाबा-काका और चाची-ताई के पास मिनट भर खड़ी रहना तुम्हें मंजूर नहीं है। बाड़े में बंधी कजरी गाय और उसकी बछिया की तुम्हें एक बार भी याद नहीं आई है। कंप्यूटर और मोबाइल से हर वक्त जुड़ी रहकर तुम भी एक मशीन हो गई हो और तुम्हें अपनी इस गलती का अहसास तक नहीं है।''

भाव्या का सिर झुक गया।

''लाड़ो, हमने तुम्हें ऊंची पढ़ाई करके अफसर जरूर बनाना चाहा, पर इतने सालों में मिले संस्कारों को भूल जाने की कीमत पर नहीं। बेहतर है, तुम पहले जैसी भाव्या बनकर रहो। उसी में तुम्हारी और हमारी सच्ची खुशी है।'' दादी भी पास आकर गंभीर कंठ से बोलीं। भाव्या ने कई दलीलें दी पर कोई भी टस से मस नहीं हुआ। यहां तक कि पापा ने उसे गांव के स्कूल चलने के लिए तैयार होने को कहा। यह सुनकर भाव्या की आंखें भर आईं, वह बिलख उठी ''*सॉरी* दादी!... *सॉरी* मां-पापा! मैं सच में पुराना पाठ भूल गई थी। लेकिन *प्लीज़*, मुझे खुद को सुधारने का एक मौका दीजिए। विश्वास दिलाती हूं, आपको एक आई.ए.एस. अधिकारी मिलेगी और एक संस्कारशील इंसान भी।''

भाव्या की कांपती आवाज। भाव्या का आंसुओं से भरा चेहरा।

भाव्या के चेहरे पर चमकती संकल्प की एक अनूठी चमक।

पल भर के लिए गहरी खामोशी छा गई।

उस खामोशी को तोड़ती हुई भाव्या की सिसकियां गूंज उठीं, तो दादी ने अपनी लाड़ली को बांहों में भर लिया, ''ठीक है, हमें तुम्हारी बात पर भरोसा है। हंसी-खुशी से शहर जाओ, पर...''

''नए-पुराने में संतुलन बनाए रखना।'' भाव्या ने वाक्य पूरा किया और रोती आंखों से मुस्करा दी। जीवन में सभी पक्षों का अपनी जगह पर होना कितना जरूरी है, वह समझ गई थी। ❑

–73 नार्थ ईदगाह कॉलोनी, आगरा-282010

रास्ता ढूंढो

–पूजा रानी, सी-8ए, चंदर विहार, दिल्ली

भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म 29 मार्च, 1914 को गांव टिगरिया, तहसील सिवनी मालवा, जिला होशंगाबाद (म.प्र.) में हुआ था। वह हिंदी के प्रसिद्ध कवि तथा गांधीवादी विचारक थे। वे दूसरे तार-सप्तक के एक प्रमुख कवि है। गांधीवाद की स्वच्छता, पावनता और नैतिकता का प्रभाव तथा उसकी झलक उनकी कविताओं में साफ देखी जा सकती है। उनका प्रथम संग्रह *गीता-फरोश* अपनी नई शैली, नई उद्‌भावनाओं और नए पाठ-प्रवाह के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ था। इनका निधन 20 फरवरी 1985 को हुआ था।

धरती पर तारे

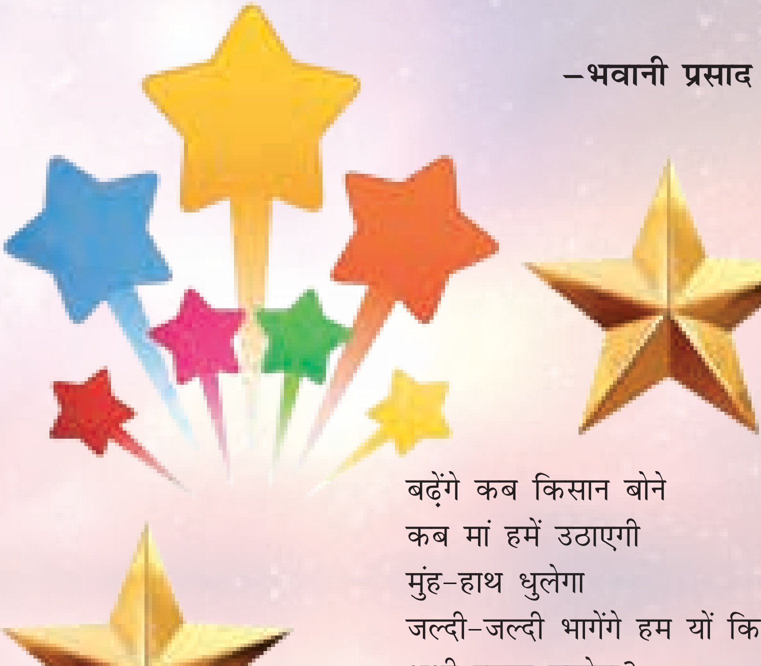

—भवानी प्रसाद मिश्र

गुस्से के मारे/सारे के सारे
आसमान के तारे
टूट पड़े धरती के ऊपर
झर-झर-झर-झर अगर
तो बतलाओ क्या होगा?
धरती पर आकाश बिछेगा
किरणों से हर कदम सिंचेगा
चंदा तक चढ़ने का
मतलब नहीं बचेगा
रूस बढ़ा या अमरीका
बढ़ने का मतलब नहीं बचेगा।
मगर एक मुश्किल आएगी
कब जाएगी रात और
दिन कब आएगा?
कब मुर्गा बोलेगा
कब सूरज आएगा
कब बाजार भरेगा
कब हम जाएंगे सोने
कब जाएंगे लोग,
बढ़ेंगे कब किसान बोने
कब मां हमें उठाएगी
मुंह-हाथ धुलेगा
जल्दी-जल्दी भागेंगे हम यों कि
अभी स्कूल खुलेगा?
नाहक हैं सारे सवाल ये
हम सब चौबीसों घंटों
जागेंगे-कूदेंगे-खेलेंगे
हर तारों से बात करेंगे।
मगर दूसरे लोग-बात उनकी क्या सोचें
उनसे कुछ भी नहीं बना
तो पापड़ बेलेंगे।

550वां प्रकाश पर्व
गुरु नानक देव
चित्रकथा : परमात्मा प्रसाद श्रीवास्तव
गुरु नानक देव सिखों के प्रथम गुरु हैं। गुरु नानक जी का व्यक्तित्व क्रांतिकारी धर्मप्रचारक, समाज सुधारक, कवि, देशभक्त, योगी, दार्शनिक और गृहस्थ जैसे अनेक गुण समेटे हुए है। इन्होंने सर्वधर्म समभाव की विचारधारा के साथ अपने उपदेश दिए और मानवता को सर्वोच्च स्थान दिया। लोग इन्हें गुरु नानक, नानक देव, बाबा नानक और नानक शाह जैसे नामों से संबोधित करते हैं। इनका जन्म 15 अप्रैल, 1469 को रावी नदी के किनारे तलवंडी गांव में कार्तिक पूर्णिमा को हुआ था।
नानक का नाम उनकी बड़ी बहन नानकी के नाम पर रखा गया। वह अपनी माता तृप्ता और पिता मेहता कालू के साथ रहते थे। उनके पिता तलवंडी गांव में पटवारी थे। उनके परिवार में उनके दादाजी शिवराम, दादी और चाचा लालू रहते थे। गुरु नानक ने अपनी स्थानीय भाषा के अलावा फारसी और अरबी भाषा भी सीखी थी। नानक को बचपन से ही चरवाहे का काम दिया गया था और पशुओं को चराते समय कई घंटों ध्यान में बैठे रहते थे। बचपन से ही वह सांसारिकता से दूर रहते थे। पढ़ने-लिखने में इनकी रुचि नहीं थी।

गांव के शासक राय बुलार ने सबसे पहले गुरु नानक की दिव्यता को समझा और उनसे खुश होकर नानक को पाठशाला में रखा। नानक के गुरु उनकी आध्यात्मिक बात रचनाओं को सुनकर चकित रह गए। किंतु 7-8 साल की अवस्था में इन्होंने स्कूल छोड़ दिया। इनके उम्र के अन्य अध्यापक भी हार मान लेते थे पर वे इनके व्यक्तित्व से प्रभावित थे।
नानक देव के पिता कालू ने सोचा कि उनके पुत्र के आध्यात्मिक तरीके उनको लापरवाह बना कर संसार से विमुख कर रहे हैं तो उन्होंने नानक को व्यापार के धंधे में लगा दिया। नानक ने व्यापारी बनकर कमाई के फायदे से भूखों को भोजन खिलाना शुरू कर दिया तभी से लंगर का इतिहास शुरू हुआ था। इससे पहले जब पहली बार नानक को व्यापार के लिए उनके पिता ने भेजा तो उनको 20 रुपये देकर इन पैसों से फायदा कमाने को कहा।
रास्ते में उनको साधुओं और गरीब लोगों का समूह मिला तो उन्होंने उन पैसों से उनके लिए भोजन और कपड़ों की व्यवस्था की। नानक जब घर खाली हाथ लौटे तो उनके पिता ने उनको मारा भी, पहली बार गुरु नानक देव ने निःस्वार्थ सेवा को असली लाभ बताया। इसी वजह से लंगर के मूलभूत सिद्धांतों का उद्गम हुआ।
नानक की बहन नानकी और जीजाजी जय राम ने नानक का विवाह 24 सितंबर, 1487 में मूल चंद की बेटी सुलखनी के साथ कर दिया।
क्रमशः...

32 वर्ष की आयु में इनके प्रथम पुत्र श्रीचंद का जन्म हुआ और चार वर्ष बाद दूसरे पुत्र लखमी दास का जन्म हुआ। कुछ समय तक गृहस्थ जीवन बिताने के बाद उन्होंने पारिवारिक जिम्मेदारी अपने ससुर को सौंपी और अध्यात्म में लीन हो गए।
1499 में नानक देव की सुल्तानपुर में एक मुस्लिम कवि मर्दाना के साथ मित्रता हो गई। तत्पश्चात लहना, बाला और रामदास से इनकी मित्रता हुई और वह इनके साथ तीर्थ यात्रा पर निकल गए।
अपनी यात्राओं के दौरान उन्होंने हिंदू और मुस्लिम, दोनों के पूजा स्थलों पर पूजा की। 1499 से 1524 तक, यानी 25 वर्षों तक उन्होंने 5 यात्राएं की जिनमें वह दक्षिण भारत, श्रीलंका, भारत के पूर्वी प्रांत, तिब्बत, चीन, अरब देशों में गए। नानक ने मूर्ति पूजा समाज में व्याप्त अंधविश्वासों की निंदा करते हुए अद्वैतवादी सिद्धांत विकसित किया। उन्होंने कहा हिंदू-मुस्लिम एक है, इनमें कोई अंतर नहीं।

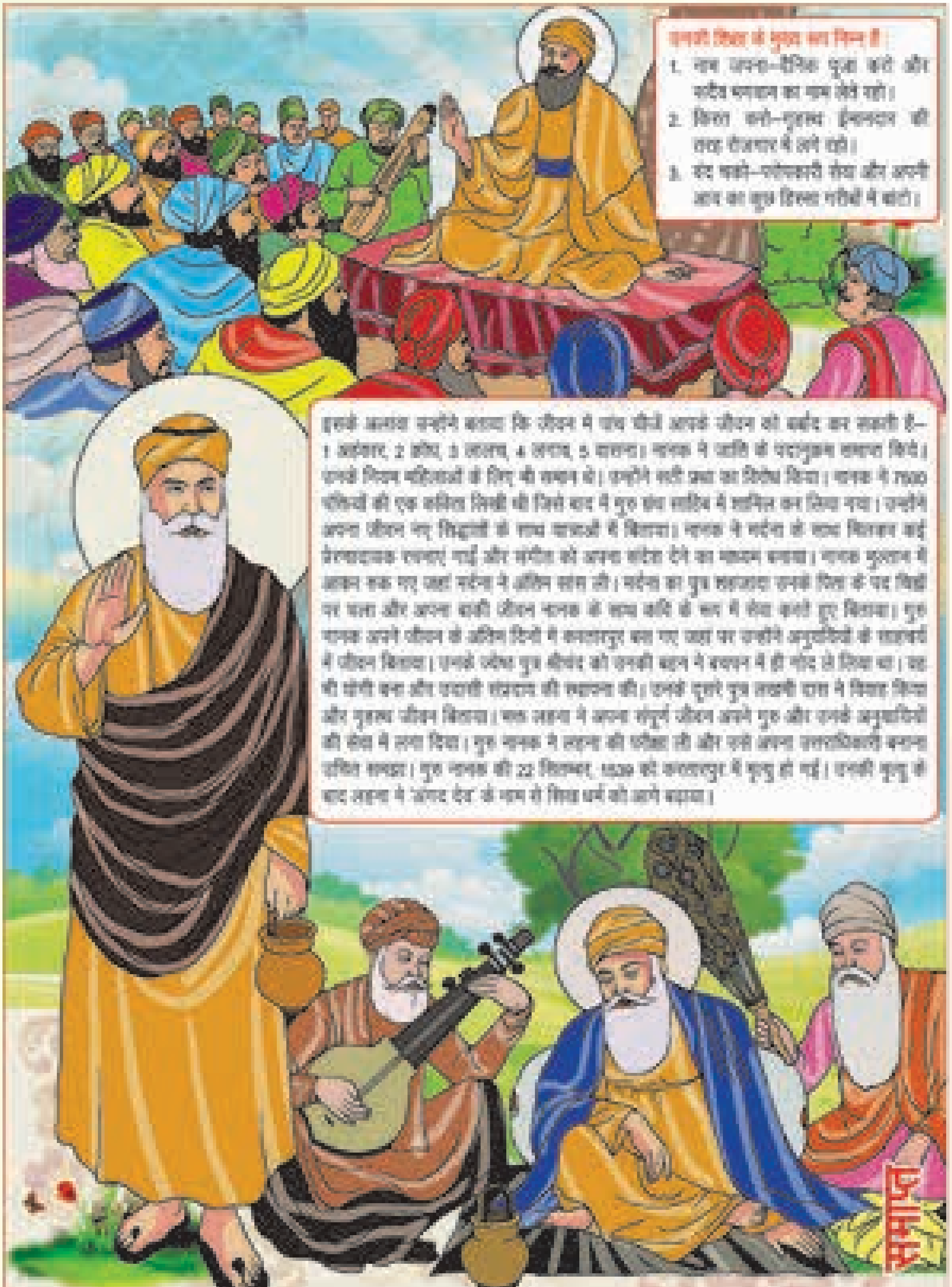

उनकी शिक्षा के मुख्य तत्व निम्न हैं :

1. नाम जपना–दैनिक पूजा करते और सदैव भगवान का नाम लेते रहो।
2. किरत करो–गृहस्थ ईमानदार की तरह रोजगार में लगे रहो।
3. वंड चखो–परोपकारी सेवा और अपनी आय का कुछ हिस्सा गरीबों में बांटो।

इसके अलावा उन्होंने बताया कि जीवन में पांच चीजें आपके जीवन को बर्बाद कर सकती हैं– 1 अहंकार, 2 क्रोध, 3 लालच, 4 लगाव, 5 वासना। नानक ने जाति के पदानुक्रम समाप्त किये। उनके नियम महिलाओं के लिए भी समान थे। उन्होंने सती प्रथा का विरोध किया। नानक ने 7500 पंक्तियों की एक कविता लिखी थी जिसे बाद में गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल कर लिया गया। उन्होंने अपना जीवन नए सिद्धांतों के साथ यात्राओं में बिताया। नानक ने मर्दाना के साथ मिलकर कई प्रेरणादायक रचनाएं गाईं और संगीत को अपना संदेश देने का माध्यम बनाया। नानक मुल्तान में आकर बस गए जहां मर्दाना ने अंतिम सांस ली। मर्दाना का पुत्र शहजादा उनके पिता के पद चिह्नों पर चला और अपना बाकी जीवन नानक के साथ कवि के रूप में सेवा करते हुए बिताया। गुरु नानक अपने जीवन के अंतिम दिनों में करतारपुर बस गए जहां पर उन्होंने अनुयायियों के साथ में जीवन बिताया। उनके ज्येष्ठ पुत्र श्रीचंद को उनकी बहन ने बचपन में ही गोद ले लिया था। वह भी योगी बना और उदासी संप्रदाय की स्थापना की। उनके दूसरे पुत्र लखमी दास ने विवाह किया और गृहस्थ जीवन बिताया। भाई लहना ने अपना संपूर्ण जीवन अपने गुरु और उनके अनुयायियों की सेवा में लगा दिया। गुरु नानक ने लहना की परीक्षा ली और उसे अपना उत्तराधिकारी बनाना उचित समझा। गुरु नानक की 22 सितम्बर, 1539 को करतारपुर में मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद लहना ने 'अंगद देव' के नाम से सिख धर्म को आगे बढ़ाया।

मीठी ईद

–विज्ञान भूषण

कक्षा छह के सेक्शन ए में सबसे पहली पंक्ति पर हमेशा अगल-बगल चार बच्चे ही बैठते थे। आशीष, राहुल, चारू और कबीर। चारों में बहुत पक्की वाली दोस्ती थी। चारों पढ़ने में भी बहुत तेज थे। आशीष विज्ञान में अव्वल था तो राहुल इतिहास में। चारू अंग्रेजी में हर परीक्षा में प्रथम आती तो कबीर गणित के सवाल झटपट कर लेता था। चारों साथ ही लंच करते और साथ ही खेलते भी थे।

चारों आपस में तो प्यार से रहते ही थे, कक्षा के दूसरे बच्चों की मदद के लिए भी हमेशा तैयार रहते। इसी वजह से स्कूल के सभी अध्यापक उन्हें पसंद करते थे। चारों बच्चे अक्सर *इंटरवल* में स्कूल के बगीचे में घूमने निकल जाते। वहां पौधों की देखभाल और साफ़-सफाई में जुटे कासिम चाचा से खूब बातें किया करते। उनके भोले-भाले सवालों के जवाब देने में कासिम चाचा को भी खूब मजा आता। वे भी इन सबसे खूब बातें करते थे।

उस दिन सुबह विद्यालय परिसर में प्रार्थना होने के बाद मुख्याध्यापक ने सूचना दी कि अगले दिन ईद-उल-फ़ितर की छुट्टी है। यह सुनते ही सारे बच्चे खुशी से उछल पड़े। कबीर और उसके तीनों दोस्त भी बहुत खुश हुए। कक्षा में आने पर कबीर ने राहुल, आशीष और चारू को बताया, ''पता है, आज शाम मैं अपने अब्बू के साथ बाज़ार जाऊंगा और नए कपड़े के साथ ढेर सारी सेवईयां भी खरीदूंगा।''

चारू ने पूछा, ''सेवईयां क्यों।''

राहुल ने जवाब दिया, "अरी बुद्धू ईद पर सेवईयां ही तो बनती हैं, मीठी-मीठी सेवईयां... हैं न कबीर...?'

कबीर चहक कर बोला, "हां. .. हां बिलकुल सही..." उसने आगे कहा, "कल तुम सब मेरे घर आना। मेरी अम्मी बहुत मीठी सेवईयां बनाती हैं... यमी...।"

कबीर ने आंखें नचाते हुए जैसे यमी कहा तो उसे देखकर आशीष से रहा नहीं गया। वह बोल पड़ा, 'मैं तो ज़रूर आऊंगा तेरे घर कबीर, पक्का वादा।'

उसकी बात सुनकर राहुल और चारू ने एक साथ कहा, "हम भी आएंगे।"

दोपहर में छुट्टी होने के बाद सारे बच्चे शोर मचाते अपने-अपने घर की तरफ जाने लगे। राहुल, आशीष और चारू के साथ जब कबीर भी स्कूल गेट से निकल रहा था तभी उसकी नज़र बगीचे के एक कोने में उदास खड़े कासिम चाचा पर पड़ी। वह उनके पास पहुंच गया। उनसे पूछा, "चाचा कल तो ईद है, हम सब बहुत खुश हैं पर आप उदास लगते हैं क्या हुआ?"

चाचा कबीर के सर पर हाथ फेरते हुए बोले, "मैं भी खुश हूं बेटा, बस अपने बच्चों आसिफ और अंजुमन की याद आ गयी। बिलकुल तुम्हारे जैसे ही हैं।"

"क्या हुआ उन्हें" कबीर ने फिर पूछा।

चाचा बोले, "हुआ कुछ नहीं। दरअसल उनके मामू जान की कुछ तबियत खराब हो गयी थी तो अपनी अम्मी के साथ दोनों बच्चे नानी के घर चले गए हैं। तो...।'

उनकी बात सुनकर कबीर समझ गया कि चाचा को अपने बच्चों की याद आ रही है। वह बिना कुछ कहे अपने दोस्तों के पास आ गया और उनके साथ घर की तरफ जाने लगा। चारों बच्चों का घर स्कूल से कुछ ही दूरी पर एक ही कॉलोनी में है। इसीलिए चारों पैदल ही साथ में स्कूल आते-जाते हैं। रास्ते में राहुल, चारू और आशीष ने कबीर से पूछा कि वह स्कूल से बाहर आते समय कासिम चाचा से क्या बात करने लगा था? कबीर ने सारी बात उन्हें बताई।

आशीष बोला, "त्यौहार का मजा तो सबके साथ ही आता है।"

राहुल ने सहमति में सर हिलाया, "हूं...।"

चारू निराश होकर बोली, "अब हम क्या कर सकते हैं?"

कबीर ने धीरे से कहा, "कुछ ज़रूर कर सकते हैं, अगर तुम सब साथ दो तो...।"

तीनों ने जब उसकी ओर देखा तो कबीर ने सबको अपने करीब बुलाया और धीरे से उनके कान में कुछ फुसफुसा कर कहा। उसकी बात सुनकर तीनों एक साथ बोल पड़े, "वाह कबीर क्या आइडिया है।"

चारों ने तय किया कि अगले दिन शाम को चार बजे राहुल, आशीष और चारू कबीर के घर पहुंचेंगे। फिर वहां से चारों एक साथ कासिम चाचा के घर जाएंगे। अगले दिन सुबह जब राहुल, चारू और आशीष ने अपने मम्मी-पापा को बताया कि उन्हें आज शाम को कबीर के साथ कासिम चाचा के घर ईद मनाने जाना है तो वे बहुत खुश हुए। उन्होंने अपने घर में भी सेवईयां बनवाई और पैक कर बच्चों को थमा दिया यह कहकर कि 'त्यौहार पर मुबारकबाद खाली हाथ नहीं देते हैं।' यह देखकर तीनों बच्चों की खुशी और भी बढ़ गई। जब तीनों कबीर के घर पहुंचे तो कबीर ने उनके हाथों में पैकेट देखकर पूछा, "इसमें क्या लाए हो तुम सब?"

जब तीनों ने बताया कि वे भी सेवईयां लेकर आए हैं तो कबीर और खुश हो गया। पहले

उसने राहुल, आशीष और चारू को अपने घर की बनी सेवईयां खिलाईं फिर चारों कासिम चाचा के घर की तरफ चल दिए।

चाचा अपने कमरे में चारपाई पर चुपचाप लेटे हुए थे। दरवाजा खुला हुआ था। चारों बच्चे एक साथ कमरे में "ईद मुबारक चाचा ईद मुबारक..." कहते हुए जब घुसे तो कासिम चाचा कुछ समझ ही नहीं पाए। वे उन चारों बच्चों को देख कर बोले, "अरे तुम सब यहां कैसे?"

आशीष बोला, "चाचा जी कल आपको उदास देखकर कबीर ने ये प्लान बनाया था।"

चारू बीच में टपक पड़ी,' मैं बताऊंगी... चाचा हम सब अपने अपने घर से आपके लिए सेवईयां बनवाकर लाए हैं।'

अब राहुल कैसे चुप रहता, "चाचा जी, बहुत यमी है।"

कासिम चाचा ने कबीर की तरफ देखा, वह मुस्कुराता हुआ सेवईयां का डिब्बा खोल रहा था।

चाचा ने चारों बच्चों को पास बुलाकर अपने सीने से लगा लिया। उनकी आंखों में खुशी के आंसू आ गए। तभी कबीर ने सेवई से भरा एक चम्मच चाचा को खिलाते हुए पूछा, "क्यों चाचा मीठी है न ईद की सेवईयां...।"

चाचा बोले, "तुम बच्चों ने इस बार की ईद को मेरे जीवन की सबसे मीठी ईद बना दिया। अल्लाह तुम सब बच्चों को हमेशा खुश रखे।"

चारों बच्चों की खिलखिलाहट से सारा कमरा गूंज गया। ❑

—345-बी, ए-6 ब्लॉक,
पश्चिम विहार, नई दिल्ली-63

कटी हुई मुस्कान

–देवेन्द्र कुमार

सब तालियां बजा रहे हैं। आज बैंक मैनेजर रमन का जन्मदिन है। सब केक का आनंद ले चुके हैं, लेकिन नरेश उदास है, उसने केक भी नहीं खाया है, एक कोने में छिपा कर रख दिया है। रह–रह कर उसकी नजर रमन की कुर्सी के पीछे दीवार पर लगे पोस्टर पर टिक जाती है, मन में जैसे कुछ होने लगता है। उस बड़े से पोस्टर में एक हंसती हुई बच्ची को दिखाया गया है। रोज बैंक में आते ही नरेश कुछ देर हंसती हुई लड़की के पोस्टर के सामने खड़े रह कर, एकटक उसे निहारता रहता है, और मन जैसे उड़ कर गांव में अपनी मां के साथ रहती बेटी मुनिया के पास पहुंच जाता है। उसे लगता है पोस्टर में दिखाई देती लड़की उसकी मुनिया ही है। वह मुनिया और उसकी मां को दिल्ली लाकर अपने साथ रखना चाहता है लेकिन... उसे मालूम है कि यह बहुत ही मुश्किल है।

लेकिन आज पोस्टर देख कर उसे धक्का लगा, उसने देखा कि लड़की के हंसते हुए होंठों के ठीक ऊपर फिटिंग के काम आने वाली फट्टी ठोक कर उस पर बिजली का तार लगा दिया गया है।

इसकी वजह से बच्ची की मुस्कान जैसे दो हिस्सों में कट गई थी। बैंक में बिजली की फिटिंग दीपक मिस्त्री करता है। बिजली की फिटिंग लड़की के चेहरे को बचा कर भी की जा सकती थी। नरेश और दीपक गहरे दोस्त हैं, लेकिन दीपक ने नरेश के मन पर गहरी चोट की है। इसके लिए वह दीपक को कभी माफ नहीं करेगा। पूरे दिन उसने दीपक से बात नहीं की। दोपहर का भोजन दोनों साथ-साथ करते हैं, लेकिन नरेश उस समय कहीं चला गया। दीपक भी महसूस कर रहा है कि नरेश का मूड ठीक नहीं है, लेकिन उसका कारण भला वह कैसे जान सकता था।

शाम के समय दीपक ने पूछ ही लिया। नरेश ने दुखी स्वर में कहा, ''यह तुमने क्या कर डाला।'' अब दीपक ने पोस्टर की ओर देखा तो समझ गया कि सचमुच उससे गलती हो गई। बच्ची की हंसी दो हिस्सों में कट गई थी और बहुत बुरी लग रही थी। बोला, ''मुझे आज पता चला कि हंसती हुई लड़की का पोस्टर तुम्हें इतना पसंद है। लेकिन ऐसे पोस्टर तो बाजार में आसानी से खरीदे जा सकते हैं, मैं अभी तुम्हें बाजार ले चलता हूं। वहां हंसते-खिलखिलाते बच्चों के एक से एक सुंदर पोस्टर मिल जाएंगे, जो चाहो ले लेना। और हां बच्ची का पोस्टर मेरी गलती से खराब हुआ है, तो तुम्हारी पसंद के पोस्टर के दाम मैं अपनी जेब से दूंगा। अब तो गुस्सा छोड़ दो मेरे दोस्त।''

लेकिन नरेश की उदासी कम न हुई। दीपक को क्या पता कि हंसती हुई लड़की में वह अपनी बेटी मुनिया का अक्स देखता था। जब दीपक ने कई बार बाजार चलने के लिए कहा तो उसने अपने मन की पीड़ा उसे बता ही दी। आज से पहले इस बारे में नरेश ने किसी से कुछ नहीं कहा था, लेकिन मजबूरन बताना ही पड़ा। नरेश सोच रहा था कि कहीं दीपक उसकी हंसी न उड़ाने लगे।

लेकिन वैसा कुछ न हुआ। दीपक नरेश के मन की पीड़ा को तुरंत समझ गया। दीपक भाग्यशाली था कि अपने परिवार के साथ रहता था। उसने नरेश हाथ थाम लिया। बोला, ''माफ करना दोस्त, सचमुच मैंने तुम्हारे मन को गहरी चोट पहुंचाई है। मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि अपनी भूल को कैसे ठीक करूं।'' नरेश चुप खड़ा था। क्या कहता बेचारा।

उस रात नरेश सो नहीं पाया। वह तीन लोगों के साथ एक कमरे में रहता था। उसके तीनों साथी समझ गए कि नरेश किसी बात पर गहरी परेशानी में है। अगली सुबह नरेश बैंक गया तो हर दिन की तरह उसने हंसती हुई लड़की के पोस्टर की ओर देखा और फिर झट आंखें फिरा लीं। वह उस ओर देखने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। आखिर क्या कर सकता था नरेश। कुछ सोच कर वह रमन के पास गया। बोला, ''सर, इसके ऊपर बिजली की फिटिंग होने के कारण यह पोस्टर खराब हो गया है, देखने में बुरा लगता है।'' रमन ने घूम कर पीछे देखा तो उसे नरेश की बात ठीक लगी। उसने कहा, ''बात तो तुम ठीक कह रहे हो। इसे हटा कर फेंक दो और बाजार से नया सुंदर पोस्टर ले आओ...''

नरेश ने तुरंत पोस्टर को हटा दिया, पर फेंका नहीं। शाम को छुट्टी के बाद पोस्टर को कमरे पर ले गया। दीपक उसके साथ था। दोनों ने मिल कर सावधानी से उसे दीवार पर लगा दिया। बिजली की फट्टी के कारण पोस्टर दो हिस्सों में कट गया था। सावधानी से लगाने के बावजूद बदनुमा जोड़ साफ दिखाई दे रहा था।

दीपक ने कहा, ''दोस्त, मेरे मन में एक विचार आया है। इस बारे में मैं तुम्हें कल बताऊंगा...'' कह कर वह चला गया। उस रात भी नरेश सो नहीं पाया यही

सोचता रहा– आखिर दीपक कल क्या बताने वाला है।

अगले दिन रविवार था। दीपक सुबह जल्दी चला आया। उसके साथ एक व्यक्ति और था। दीपक ने परिचय कराया। कहा, ''ये मेरे मित्र अविनाश हैं, एक स्कूल में बच्चों को ड्राइंग सिखाते हैं। बहुत अच्छी पेंटिंग बनाते हैं। मैंने इन्हें तुम्हारी परेशानी के बारे में सब कुछ बता दिया है। इस बारे में यह जरूर हमारी मदद कर सकते हैं...''

अविनाश कुछ देर तक पोस्टर के सामने खड़े होकर देखते रहे। फिर अपने झोले से कई ब्रश और रंगों का डिब्बा निकाल लिया। फिर पोस्टर के दो भागों के बीच के जोड़ को रंग और ब्रश से संवारने लगे। नरेश और दीपक एकटक उन्हें काम करते देखते रहे। जब उन्होंने काम पूरा किया तो बच्ची की हंसी अब पहले की तुलना में ठीक लग रही थी, लेकिन बीच की कटी-फटी, टेढ़ी-मेढ़ी रेखा अब भी साफ देखी जा सकती थी। अविनाश ने कहा, ''मैं इससे ज्यादा इसे नहीं सुधार सकता। लेकिन एक काम हो सकता है।''

''क्या काम?''– नरेश और दीपक ने एक स्वर में पूछा–

अविनाश बोले, ''मैं इस पोस्टर को देख कर इस लड़की की एक पेंटिंग बना सकता हूं। वह इस पोस्टर जितनी बड़ी तो नहीं होगी, पर पोस्टर वाली लड़की की हंसी और उसके चेहरे अन्य भाव पेंटिंग में पूरी तरह दिखाई देंगे।''

''यह तो बहुत अच्छा होगा।'' नरेश ने कहा।

''लेकिन पेंटिंग पूरी होने में कई दिन लग सकते हैं। मैं हर दिन स्कूल के बाद शाम के समय आकर पेंटिंग पूरी कर सकता हूं...'' अविनाश ने कहा–

''तब तो इसमें आपका काफी समय नष्ट होगा।'' नरेश ने सकुचाते हुए कहा।

''नहीं पेंटिंग बना कर मुझे अच्छा लगेगा, जानते हो दीपक ने

मुझे तुम्हारे परिवार के बारे में मुझे सब बता दिया है..."

कमरे में मौन छा गया। अविनाश पोस्टर के सामने बैठ कर पेंटिंग बनाने लगे। कुछ देर बाद उन्होंने नरेश से पूछा, "तुम्हारे पास बेटी मुनिया का फोटो तो होगा।" नरेश ने झट मुनिया के कई फोटो अविनाश के सामने रख दिए। वह समझ नहीं पाया कि अविनाश ने पेंटिंग बनाते हुए बीच में हाथ रोक कर मुनिया के फोटो क्यों मांगे थे। लेकिन वह पूछ पाता, इससे पहले ही अविनाश ने कहा, "देखो नरेश, पोस्टर वाली बच्ची के बारे में हम कुछ नहीं जानते, पर मुनिया तो हमारी अपनी है। मेरे मन में यह विचार आया है कि इस अनजान चेहरे में मुनिया को उसकी हंसी और उसके भोले हाव-भाव के साथ शामिल किया जा सकता है। तब तुम्हें पोस्टर की अनजान लड़की के चेहरे में अपनी मुनिया की छवि नहीं खोजनी पड़ेगी।"

अविनाश की बात सुन कर नरेश का मन खुशी से उछल पड़ा। क्या सच ऐसा चमत्कार हो सकता है! उसे विश्वास नहीं हो रहा था। लेकिन अविनाश की उंगलियां ब्रश और रंगों से मुनिया का मुस्कुराता चेहरा उभारने का चमत्कार कर रही थीं, कई दिन की मेहनत के बाद मुनिया की पेंटिंग पूरी हुई। नरेश अपलक ताकता रह गया। मुनिया के होंठों पर पोस्टर वाली लड़की की मुस्कान हंस रही थी। नरेश ने भावुक होकर अविनाश के पैर छूने को हाथ बढ़ाए पर अविनाश ने उसके हाथ थाम लिए। बोले, "यह सब करने की जरूरत नहीं। अगर इस पेंटिंग से तुम्हारा मन शांत हो सके तो मैं अपनी कला को सार्थक मानूंगा।"

अगली सुबह नरेश पेंटिंग लेकर रमन के पास गया। रमन ने कहा, "अद्‌भुत अनुपम कलाकृति इसे तुरंत पुराने पोस्टर के स्थान पर लगा दो।" मुनिया की पेंटिंग लगा दी गई। हर कोई कलाकार की तारीफ कर रहा था। सबसे ज्यादा खुश था नरेश। सबके लिए मुनिया का चेहरा भी पोस्टर वाली लड़की की तरह अनजान था। लेकिन नरेश जब-जब पेटिंग की तरफ देखता तो उसे लगता जैसे मुनिया ठीक उसके सामने खड़ी हंस रही हो। उसे जीवन की सबसे बड़ी खुशी मिली थी। ❑

-ई-403, प्रिंस अपार्टमेंट, पटपड़गंज, नई दिल्ली-110092

चित्र बनाओ प्रतियोगिता

(अगस्त, 2019)

बाल भारती का लोकप्रिय कॉलम 'चित्र बनाओ प्रतियोगिता' पाठकों की मांग पर पुनः आरंभ किया गया है। इस कूपन के साथ 31 जून, 2019 तक *'मेरी आज़ादी मेरा अधिकार'* पर आधारित एक आकर्षक चित्र बनाकर हमारे पास भेजें। पुरस्कृत तथा सराहनीय चित्रों को *बाल भारती* में प्रकाशित किया जाएगा। प्रथम विजेता को एक वर्ष तक हमारी ओर से *बाल भारती* की मुफ्त सदस्यता दी जाएगी।

नाम ....

आयु ....

पता ....

....

....

इस प्रतियोगिता में 16 वर्ष तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं।

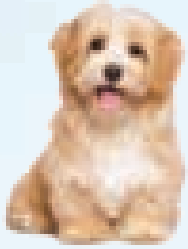

प्यारा गोलू

—वेद मित्र शुक्ल

श्रेयस के घर के ठीक सामने टीलानुमा छोटा-सा मैदान था। कुछ लोग उस पर घरों की मरम्मत के दौरान निकले मिट्‌टी, बजड़ी, बालू आदि के मलबे को फेंकने के लिए, कुछ एक-दो गाय, भैंस आदि पालतू पशुओं को बांधने के लिए, और श्रेयस व उसके दोस्त खेल के मैदान की तरह उसे उपयोग में लाते थे। वह टीले वाला मैदान सभी के घरों से चारों ओर से घिरा हुआ था। कोई भी अपने घर की छत या बाहर खड़े होकर आसानी से जान सकता था कि वहां क्या हो रहा है। बच्चों के लिए तो वह कोई साधारण सा टीला नहीं, बल्कि उनकी जान थी।

उस मैदान की एक अलग कहानी थी। एक नहीं, दो-दो कहानियां। बच्चों की अलग और बड़ों की अलग। बड़ों की तो बड़ों जैसी ही कहानी थी। श्रेयस की मम्मी उस कहानी को कभी-कभी एक सांस में उसे बता जाती, 'बेटा, टीले वाली जमीन में पांच भाइयों के हिस्से हैं। पांचों आपस में एकजुट नहीं हैं। झगड़ते रहते हैं। जमीन विवादित है। लंबे समय से मुकदमा न्यायालय में चल रहा है। इसी कारण से यह खाली पड़ी रहती है और मोहल्ले भर के

उपयोग में आती है। श्रेयस बेटा, सच ही कहते हैं कि बिल्लियों की आपस की लड़ाई में बंदर के मजे होते हैं।'

बंदर और बिल्ली की कहानी याद आते ही श्रेयस खीखी-खीखी करते हुए हंसने लगता।

लेकिन रहस्य-रोमांच के ख्यालों से भरे श्रेयस और उसके साथियों का कुछ अलग ही मानना था। वह यह कि कोई बड़ा जलजला यानी भूकंप आया होगा और इस टीले पर बनी इमारत को खंडहर में तब्दील कर गया होगा। मैदान के नीचे दबे खंडहर के साथ अवश्य ही एक बड़ा खजाना दबा है। जमीन के मालिक के परिवार वाले उस वक्त का अब भी इंतजार कर रहे हैं कि कैसे चुपचाप वह बड़ा खजाना निकाला जा सके। लेकिन है तो वह पुराना खजाना। ऐसे खजानों की सुरक्षा नाग देवता करते हैं। फिर भला किसकी हिम्मत कि नाग देवता से टक्कर ले सके और उस खजाने को हासिल करे। सब बच्चे जब भी शाम को खेल-कूद के बाद फुर्सत के कुछ पल पाते तो इस कहानी में और भी दो-चार बातें जोड़ कर एक-दूसरे से कहते-सुनते। कुछ तो उस खजाने को हासिल करने की योजनाएं भी बना चुके थे। सच पूछो तो टीले की कहानी के बहाने सभी अपनी-अपनी गप्प हांकते थे।

इसी टीले पर श्रेयस को एक अनूठा दोस्त मिला। जिसका नामकरण बालमंडली ने ही किया। नाम रखा 'गोलू।' अब तो खेल-कूद के समय बच्चे टीले पर 'गोलू-गोलू' की आवाज करते हुए भागते-दौड़ते दिखाई पड़ते- गोलू पीछे-पीछे और बच्चे आगे-आगे; गोलू एक कुत्ता था। टीले पर उसके मिलने की कथा बड़ी रोचक है। वैसे तो घर के आसपास घूमते आवारा कुत्तों पर मुश्किल से ही किसी का ध्यान जाता है; श्रेयस भी उनसे बचके और डरके सावधान रहा करता था, लेकिन, अचानक एक शाम खेलते-कूदते बच्चों ने कुछ पिल्लों को देखा। वे अपनी मां से चिपटे हुए थे। उन प्यारे पिल्लों को देखकर तो सारे ही बच्चे अपनी-अपनी गोद में उठा लेने के लिए दौड़ ही पड़ते, पर, उनकी मां कहीं दौड़ा न दे इसलिए सब दूर से ही उन्हें देखते रहे। थोड़ी देर बाद जब उनकी मां उन्हें अपना दूध पिला के वहां से चली गई। तो श्रेयस सहित सभी बच्चों ने पिल्लों को बारी-बारी से अपनी गोद में उठा कर दुलारा। शाम जब रात में बदलने लगी तब सब अपने-अपने घर को लौटने लगे, पर कहीं न कहीं यह सोचते हुए कि पिल्लों के रूप में हमें अच्छे खिलौने खेल-कूद के लिए मिल गए हैं।

श्रेयस भी अपने घर आ चुका था। उसकी मम्मी को पता चल चुका था कि आज वह पिल्लों के साथ खेल कर आया है। इस कारण उसे और भी अच्छे से हाथ-पांव धोने का निर्देश हुआ। यह सुझाव भी मिला कि ऐसे पिल्लों से खेलना अच्छी बात नहीं है।

रात बीती। दूसरे दिन। स्कूल से लौटकर श्रेयस सब बालमित्रों के साथ फिर एक बार टीले पर था। कब पिल्ले उसके साथ या वे उनके साथ खेलने लगे पता ही न चला? किसी बच्चे ने उन्हें कुछ खाने को दिया, तो एक-एक करके अधिकतर लोगों ने अपने घरों से कैसे भी कुछ लाकर उनको खिलाने-पिलाने की कोशिशें की। ऐसा लग रहा था कि पिल्लों से खेलने के लिए बच्चों को बड़ों की मूक सहमति मिल गई थी। इस प्यार-दुलार के बीच कब उन पिल्लों की शांत स्वभाव वाली मां से बच्चों ने डरना छोड़ दिया पता भी न चला?

एक दिन किसी बच्चे ने बताया कि उसने रात में इन पिल्लों की जोर-जोर से रोने की आवाज सुनी है। शायद ठंड लगती होगी। इस कारण से सबने तय किया कि इनका भी एक घर होना चाहिए। उनके लिए घर बनाना कोई बड़ी बात नहीं थी। मिनटों में बच्चों ने एक महलनुमा घर आस-पास पड़ी ईंटों को जोड़ के

बना दिया। श्रेयस को थोड़ा और कल्याणकारी तरकीब सूझी और उसने कुछ पुआल भी उस घर में रख दी जिससे कि थोड़ी गर्मी मिल सके। इस सबके बाद एक-एक करके उनको घर में प्रवेश करा दिया गया। रैनबसेरे का इंतजाम करके खुशी-खुशी सब बच्चे अपने घर आ गए थे। इस संतोष के साथ कि अब उन नन्हे पिल्लों को आराम रहेगा। पर, अगले दिन जो पाया गया वह तो दिल दहलाने वाला था।

स्कूल से आकर जब सब टीले पर पहुंचे तो पाया कुल चार में से एक का पैर टूटा था, जो अधमरा सा हो गया था। दो तो टहल-घूम रहे थे, पर, चौथा आस-पास कहीं भी न था। बच्चों द्वारा निर्मित पिल्लों का महल भी ढह सा गया था। यह सब देख कर दिमाग में जो आया उस पर सारे ही बच्चे ज्यादा देर तक सोच नहीं सकते थे। क्योंकि हुआ बहुत दु:खद था। सबको समझ में आ गया था कि ईटों को जोड़कर बनाया गया घर मजबूत नहीं था। उनमें रहने वाले पिल्ले भी ऐसे घरों में रहने के अभ्यस्त नहीं थे। बच्चों द्वारा अति प्रेम और उत्साह में किया गया नेक काम घातक सिद्ध हुआ। एक बच्चे ने बताया कि कैसे मरे जानवरों को नगरपालिका वाले उठा कर ले जाते हैं। सब बच्चों को लग रहा था कि जैसे उन्होंने कोई भारी गलती कर दी हो। अपराधबोध से भरे हुए सबने तय किया कि उनके द्वारा बनाए महल में अब वे पिल्ले नहीं रहेंगे। उस महल को पूरी तरह से ढहा दिया गया। कुछ जूट के फटे-पुराने बोरे और पुआल ही वहां रहने दिया। अब सब ठीक था, लेकिन एक पैर से जख्मी लंगड़ा पिल्ला तो अपनी मां का दूध पीने में पिछड़ जाता था। बाकी दो तो खूब छक कर अपनी मां का दूध पीते थे। एक दिन बच्चों को वह लंगड़ा पिल्ला भी नहीं दिखा। अब दो ही बचे थे।

बचे हुए उन दोनों में से भी एक जो ब्राउन और सफेद रंग का गोल-मटोल था, वह खेल-कूद व अपनी मां का दूध पीने में बहुत आगे रहता। उसका नाम गोलू रखा गया था। एक घटना घटित होनी अभी शेष थी। पास के ही मुहल्ले की एक दूसरी बालमंडली को पता चल गया कि दो प्यारे पिल्ले पास के एक टीले पर पल रहे हैं।

वे किसी समय आए और उनको वहां से उठा ले गए। जब श्रेयस और बाकी बच्चों को पता चला तो विश्वयुद्ध जैसा वातावरण तैयार हो गया। फिलहाल, श्रेयस वाली बालमंडली वापिस तो लेकर आई, पर, केवल गोलू को। दूसरा न टीले का रहा और न ही दूसरी बालमंडली वालों का ही प्यार पा सका। अब तक गोलू भी थोड़ा बड़ा हो चुका था और बच्चे भी यह समझ चुके थे कि इन आवारा पशुओं का कुछ ऐसा ही जीवन होता है।

जीवन के अनूठे संघर्ष में एकमात्र बचे गोलू के लिए बच्चों का प्यार असीम था। सब घंटों उसके साथ खेलते रहते। एक दिन श्रेयस खुश होकर जोर से चिल्लाया, "अरे, देखो, देखो, गोलू तो हैलो-हाय और टाटा-बाय-बाय भी करता है।" सबने ऐसा होते देखा तो बहुत खुश हुए। अब प्रतिदिन गोलू से सभी टाटा-बाय-बाय करते थे। असल में हुआ यों था कि जो भी उससे प्यार से मिलता वह अपनी पूंछ हिलाने लगता। ऐसा लगता जैसे हाथ न होने के कारण पूंछ से ही हैलो कहकर अभिवादन कर रहा हो। लोगों को उसकी पूंछ से हैलो-हाय करवाया जाता था।

श्रेयस को यह भी पता चला कि कुत्ते अपने शरीर के कुछ हिस्से को खुजला नहीं पाते हैं। जिसमें उसका माथा भी एक अंग है। जब उसके माथे को सहलाया जाता तो वह बिल्कुल शांत होकर चुपचाप खड़ा रहता और खुश होता। ऐसे में श्रेयस उसे "गाय जैसा सीधा" कहने से नहीं चूकता। भागते-दौड़ते बच्चों के पीछे-पीछे वह घंटों भागता रहता। समय बीत रहा था। गोलू बड़ा हो गया था। वह पिल्ले से एक कुत्ता हो गया। लेकिन बच्चों के लिए वह बड़ा कहां हुआ था। सब उसके साथ वैसे ही पहले की तरह खेलते और वह भी सबके साथ। पशुओं की भी अपनी अलग तरह की जरूरतें होती हैं। कभी-कभी वह एक-दो दिन के लिए गायब हो जाता तो बच्चे बहुत निराश नहीं होते। घूम-फिरके वह आ ही जाता, पर, एक बार जब वह लौटा तो उसकी देह में एक दो जगह गहरे जख्म थे। शायद कुत्तों की आपस की लड़ाई में उसके साथ ऐसा हुआ था।

दिन बीते तो उसके जख्म अपने आप भरने को आए, लेकिन माथे पर लगा जख्म और अधिक गहरा गया। श्रेयस को ऐसे समय में ध्यान आया कि कुत्ते तो अपना जख्म चाट कर ठीक कर लेते हैं। गोलू ने अपने माथे के घाव को छोड़ कर देह के बाकी जख्मों को तो ठीक कर लिया, लेकिन, माथे तक तो जीभ पहुंच ही न पाई होगी। घाव नहीं भर रहा था। गोलू परेशान रहने लगा था। अब वह बच्चों के साथ बहुत ज्यादा जुड़ाव नहीं महसूस करता था। अकेले बैठा रहता। कभी-कभी बुरी तरह से भौंकता। श्रेयस को वह डरावना लगने लगा था। सुनने में यह भी आया कि गोलू ने किसी को काटने के लिए दौड़ा दिया। अब बच्चे उसके साथ बिल्कुल नहीं खेल पाते थे। वह जब दिखता तो जीभ लटका, इस गली से उस गली में दौड़ता रहता। गोलू बच्चों को अब भी प्यारा था, पर, वह खतरनाक हो गया था। एक दिन वह हमेशा के लिए गायब हो गया।

श्रेयस ने ऐसे पहले भी कुत्तों को गायब होते देखा था, लेकिन, इस बार प्यारा गोलू गायब हुआ था। उसने मम्मी से जोर देकर पूछा कि आखिर गोलू गया कहां? गोलू के लिए श्रेयस के प्यार को समझते हुए मम्मी ने बतलाया, "उसे इलाज के लिए नगरपालिका वाले उठाकर ले गए हैं। जब ठीक हो जाएगा तो खुद-ब-खुद पहले की तरह लौट आएगा।" इस बात से श्रेयस का मन तो बहल गया था, पर, नासमझ समझे जाने वाले बच्चों की समझ से सच्चाई छिपी भी नहीं रहती। पता था कि गोलू अब वापिस नहीं आएगा। ❑

–अंग्रेजी विभाग,
राजधानी महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली–110015

ब्लैक होल की पहली तस्वीर

–प्रदीप कुमार मुखर्जी

सूरज और रोहिणी अपने दादाजी के गांव आये थे। दादाजी से मिलने का तो उन्हें बहुत दिनों से मन था ही, इस बार गांव आने के पीछे एक दूसरा आकर्षण भी था। और वह था परेश चाचा से मिलने का सुनहरा मौका। परेश अमेरिका की किसी वेधशाला में खगोलविद् थे। बहुत दिनों बाद अपने पिता से मिलने वह भारत आए थे।

सूरज और रोहिणी को देखकर परेश चाचा का चेहरा खिल गया। उन्होंने पूछा, ''क्यों सूरज और रोहिणी। तुम लोगों को गांव कैसा लग रहा है?''

रोहिणी बोली, ''बहुत ही अच्छा चाचा जी। कल हरखू के लहलहाते खेतों को हमने देखा।''

परेश बोले, ''इसका मतलब तुम लोगों को यहां बहुत मजा आ रहा है।''

सूरज ने कहा, ''हां चाचाजी, आप अमेरिकी वैधशाला में खगोलविद् हैं। यह बताइए खगोल विज्ञान में आजकल क्या चल रहा है?''

जवाब में परेश बोले, ''सूरज, तुमने अच्छा सवाल किया। खगोल विज्ञान में तो इतनी जबर्दस्त खोज हुई है कि तुम सुनकर उछल जाओगे।

रोहिणी बोली, ''आप ब्लैक होल के पहले चित्र की बात तो नहीं कर रहे हैं चाचाजी। मैंने अखबार में पढ़ा था और इंटरनेट से भी मुझे इसकी जानकारी मिली।''

सुनकर खुश हुए परेश चाचा। बोले, ''वाह! रोहिणी तुम्हें तो सारी खबर है। ब्लैक होल को देख पाना हमारे लिए संभव नहीं है। लेकिन, खगोलविद् अब तो इस अदृश्य विंग का पहला चित्र लेने में सफल हुए हैं। यह एक असाधारण वैज्ञानिक उपलब्धि है।''

सूरज ने पूछा, ''चाचाजी, मुझे यह जानने की बड़ी उत्सुकता है

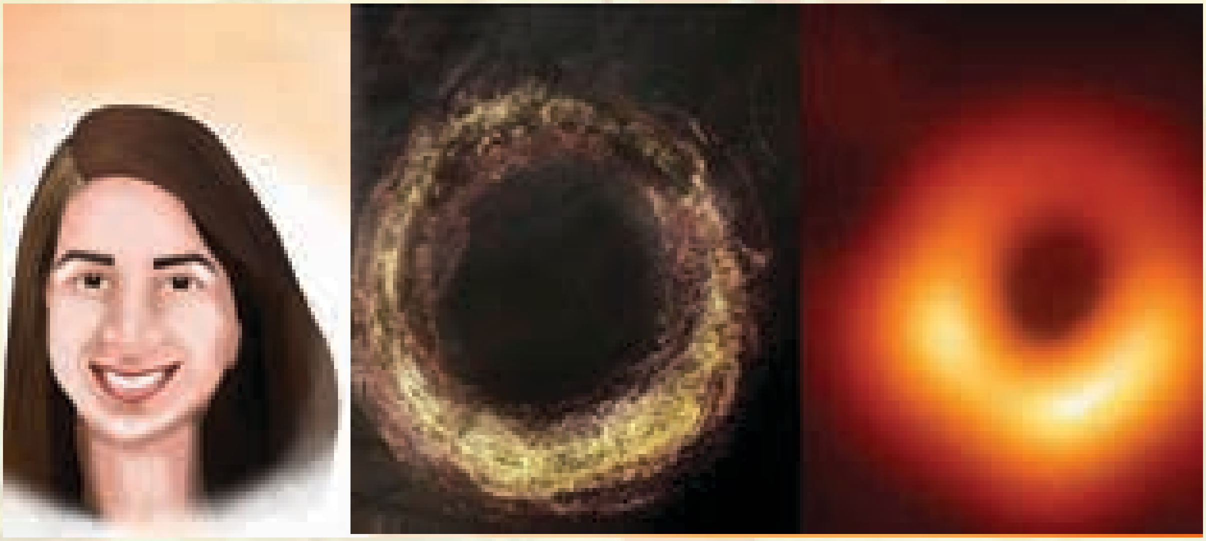

कि ब्लैक होल का पहला चित्र लेना किस प्रकार संभव हुआ?''

परेश बोला, ''चलो छत पर चलते हैं। वहीं खुले आकाश तले बात करेंगे।''

सूरज और रोहिणी अपने चाचाजी के साथ छत पर चले आए। झींगुरों के बोलने की आवाज साफ सुनाई पड़ रही थी और छत से आसमान में सैकड़ों तारे टिमटिमाते नजर आ रहे थे।

रोहिणी बोली, ''चाचाजी, यहां की साफ और ताजी हवा में कितना मजा है। प्रदूषण का कहीं कोई नामोनिशान तक नहीं।''

सूरज बोला, ''और हां चाचाजी, तारे भी कितने साफ दिखाई दे रहे हैं।''

परेश बोले, ''हां सूरज, तुमने ठीक कहा। शहरों में तो प्रकाश प्रदूषण के कारण तारे भी ठीक से दिखाई नहीं देते। तुम भी तो एक तारा ही हो सूरज।''

रोहिणी ने कहा, ''सूरज के कारण ही धरती पर जीवन है। एक दिन जब सूरज की भट्टी बुझ जाएगी तो धरती पर जीवन भी नहीं बचेगा।''

सूरज बोला, ''यह आप क्या कर रही हैं। सूरज में भट्टी भला कहां से आई?''

परेश बोले, ''हां सूरज, रोहिणी बिल्कुल सही कह रही है। सूरज की भट्टी मतलब उसकी ऊर्जा। सूरज में मौजूद हाइड्रोजन के धीरे-धीरे हीलियम में बदलने के कारण ही उसमें ऊर्जा उत्पन्न होती है। वैज्ञानिक इस प्रक्रिया को नाभिकीय संलयन यानी न्यूक्लियर फ्यूजन कहते हैं।'' न्यूक्लियर फ्यूजन के कारण ही सूरज की भट्टी जलती है। क्या यह संलयन की प्रक्रिया तारों में होती है चाचाजी?''

परेश : ''नहीं रोहिणी। केवल सूरज या उससे बड़े तारे में ही यह प्रक्रिया होती है। दरअसल, छोटे तारों के केंद्रीय भाप का तापमान काफी कम होता है। तभी इनमें संचयन की प्रक्रिया नहीं हो पाती। यही कारण है कि छोटे तारे बस हल्के-हल्के ही चमकते हैं और ये तब तक चमकते हैं जब तक कि उनकी सारी ऊर्जा खत्म नहीं हो जाती है।''

चाचाजी की बातों को ध्यान से सुनते सूरज ने पूछा, ''तो इसका मतलब यह हुआ चाचाजी कि जब सूरज की सारी ऊर्जा खत्म हो जाएगी तो वह भी चमकना बंद कर देगा?''

जवाब में परेश बोले, ''हां सूरज। सूरज की सारी ऊर्जा खत्म होने के बाद वह ठंडा पड़ जाएगा और चमकना बंद कर देगा। मगर घबराने की कोई बात नहीं क्योंकि अगले करीब पांच अरब वर्षों तक प्रज्जवलित रहकर सूरज हमें प्रकाश और ताप देता रहेगा। लेकिन, हाइड्रोजन के हीलियम में बदलते चले जाने के कारण सूरज की ऊर्जा का स्रोत यानी हाइड्रोजन धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। अरबों वर्ष बाद सूरज का बाहरी हिस्सा फैलने लगेगा। इस प्रकार फैलते-फैलते सूरज आकार में बहुत बड़ा हो जाएगा। लेकिन फैलने के कारण यह ठंडा भी होता जाएगा और तब इसका रंग पीले से लाल हो जाएगा। इस प्रकार सूरज एक लाल दानव तारा यानी *रैड जाइंट स्टार* में बदल जाएगा। लाल दानव बने सूरज का आकार कम से कम सौ गुना अधिक हो जाएगा...।

बीच में टोकते हुए सूरज बोला, ''चाचाजी, इतना बड़ा! यानी सूरज का आकार एक दानव जितना हो जाएगा?''

जवाब में परेश बोले, ''हां सूरज एक मजे की बात सुनो। लाल दानव बने सूरज के अंदर हमारी पृथ्वी समा जाएगी।'' रोहिणी बोली, ''सूरज फैलकर दानव जैसा हो जाएगा। यह तो उस कहानी की तरह हुआ जिसमें एक चूहा शेर बन गया था।''

हंसकर परेश बोले, ''तुमने ठीक कहा रोहिणी। लेकिन, कहानी में चूहा शेर बन गया था और फिर दोबारा उसे चूहा भी बनना पड़ा था। लेकिन, यहां तो

कहानी में कुछ ट्विस्ट है।''

सुनकर चौंक पड़े दोनों सूरज और रोहिणी। दोनों ने एक साथ पूछा, ''ट्विस्ट चाचाजी, भला कैसे?''

परेश : ''हां, सूरज और रोहिणी। यहां दानव रूप से सूरज बौने रूप में चला आता है।''

सूरज : ''दानव से बौना?'' यह तो जादू जैसा लग रहा है चाचाजी।''

परेश : ''हां सूरज। इसे एक किस्म का जादू ही समझ लो।''

रोहिणी : ''जादू, चाचाजी? तो फिर जादू की छड़ी भी होगी?'' जवाब में परेश बोले, ''हां, रोहिणी। लाल दानव अवस्था में पहुंचे सूर्य में पैदा हुए असंतुलन को ही तुम जादू की छड़ी समझ सकती हो। जब यह छड़ी घूमती है यानी जब असंतुलन पैदा होता है तो सूर्य के बाहरी हिस्से का पदार्थ धीरे-धीरे उससे अलग होकर आसपास बिखरने लगता है। और आखिर सूर्य एक सफेद बौना तारा बन जाता है।''

सूरज : ''यानी शेर चूहा न बनकर एकदम से चींटी बन जाता है चाचाजी।''

परेश बोले, ''हां सूरज। सूर्य अपने मूल आकार से करीब एक हजार गुना बौना बन जाता है यानी तब इसका आकार सिमट कर लगभग पृथ्वी के बराबर हो जाता है। सफेद बौने तारे में नाभिक और इलेक्ट्रॉन इतनी सघनता से ठूंसे होते हैं कि इसका घनत्व बहुत अधिक होता है। पानी के घनत्व के एक लाख से लेकर एक करोड़ गुना तक सफेद बौने तारे के पदार्थ का घनत्व हो सकता है। तुम लोगों को यह जानकर आश्चर्य होगा सूरज और रोहिणी कि इसके एक चम्मच भर पदार्थ का भार ही एक टन यानी करीब एक हजार किलोग्राम के बराबर होगा।''

सूरज और रोहिणी ध्यान से चाचाजी की बातों को सुन रहे थे। अचानक सूरज बोला, ''चाचाजी, अभी तक आपने ब्लैक होल के बारे में कुछ नहीं बताया।''

सुनकर हंस दिए परेश बोले, ''अगर सीधे ही ब्लैक होल के बारे में बताने लगता तो तुम लोगों को मजा नहीं आता। इसलिए, सिलसिलेवार बता रहा हूं ताकि रोचक चर्चा के माध्यम से हम ब्लैक होल तक पहुंचें।'' सूरज ने पूछा, ''चाचाजी, ब्लैक होल तक पहुंचने में और कितनी चर्चा हमें करनी होगी?''

जवाब में परेश बोले, ''सुनो सूरज और रोहिणी। जैसे हमारा जन्म होता है और फिर मृत्यु, इसी प्रकार तारे भी जन्म लेने के बाद मृत्यु को प्राप्त होते हैं। कुछ तारे ब्लैक होल के रूप में अपनी मृत्यु को प्राप्त होते हैं यानी उनकी अंतिम परिणति ब्लैक होल के रूप में होती है।''

रोहिणी बोली, ''समझ गई चाचाजी। तारे के जन्म से लेकर ब्लैक होल तक उसकी अंतिम परिणति के बारे में हमें जानना होगा। यह बताइए कि सूर्य की तरह क्या हर तारा सफेद बौने तारे में बदलता है?''

सुनकर मुस्कुरा दिए परेश। बोले, ''तुमने बड़ा अच्छा सवाल किया है रोहिणी। कोई तारा सफेद बौना तारा बनेगा या नहीं, यह उसके आरंभिक द्रव्यमान पर निर्भर करता है। भारतीय मूल के खगोल भौतिकीविद् सुब्रह्मण्यन चंद्रशेखर, जो अमेरिका में जा बसे थे, ने अपने शोध द्वारा बताया था कि सफेद बौने तारे में बदलने के लिए तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान का 1.4 गुना होना चाहिए। इस सीमा को चंद्रशेखर सीमा यानी चंद्रशेखर लिमिट कहते हैं।''

रोहिणी ने पूछा, ''यानी चाचाजी, जिन तारों का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान के 1.4 गुना से अधिक होता है, वे सफेद बौने तारे नहीं बनेंगे?''

जवाब में परेश बोले, ''हां रोहिणी, ऐसे तारे लाल दानव अवस्था में आने के बाद असंतुलन के कारण विस्फोटित हो सकते हैं।''

सुनकर चौंक गया सूरज। उसने पूछा, ''तारे में विस्फोट, चाचाजी?''

सूरज की बात सुन रोहिणी भर बोली, ''क्यों नहीं सूरज। धरती पर भी तो आतंकवादी बमों का विस्फोट करते रहते हैं।

प्रत्युत्तर में सूरज बोला, ''लेकिन, भला तारों में आतंकवादी कहां से पहुंच गया?''

रोहिणी : ''क्यों, भूल गए सूरज। वहां जादूगर भी तो पहुंच गया था जिसने दानव तारे को बौने तारे में बदल दिया था।''

सूरज : ''लेकिन वहां तो दानव से बौना बन गया था तारा। विस्फोट के बाद तो तारा नि:शेष हो जाएगा, बचेगा ही नहीं।''

भाई-बहन की बातचीत को चुपचाप सुन रहे थे परेश। अब बोले, ''यह तुमसे किसने कहा सूरज कि विस्फोट के बाद तारा एकदम नष्ट हो जाएगा? असल में, विस्फोट के बाद भी तारे के बीच की छोटी-सी द्रव्यराशि बच जाती है जो सिकुड़कर एक छोटे मगर सघन पिंड के रूप में आ जाती है। इस पिंड को न्यूट्रॉन तारा कहते हैं। केवल न्यूट्रॉन नामक कणों से बने होने के कारण ही इस तारे को यह नाम दिया जाता है। यह तारा कितना सघन होता है यह जानकर तुम दोनों दांतों तले अंगुली खा लोगे सूरज और रोहिणी।''

रोहिणी: ''चाचाजी, क्या इतना सघन होता है न्यूट्रॉन तारा?''

परेश : ''हां रोहिणी। इसके एक चम्मच भर पदार्थ का भार एक अरब टन यानी दस खरब किलोग्राम के बराबर होता है। इस तारे में एक और खासियत भी होती है।''

सूरज बोला, ''आप तो एक के बाद एक अजूबा तारों से हमारा परिचय करवा रहे हैं चाचाजी। अब बताइए न न्यूट्रॉन तारे की खासियत के बारे में।''

परेश बोले, ''तो सुनो, न्यूट्रॉन तारे की खासियत यह होती है कि यह बहुत तेजी से घूमता है और मजे की बात यह कि घूमता हुआ यह तारा रेडियो तरंगों का उत्सर्जन भी करता है। इस घूमते हुए तारे को स्पंदनशील तारा यानी पल्सर भी कहते हैं।''

अचानक सूरज से पूछा, ''लेकिन, एक बात तो आपने बताई नहीं कि आखिर तारे में विस्फोट क्यों होता है?

जवाब में परेश बोले, ''हां, सूरज जब कोई विशाल तारा गुरुत्वाकर्षण के कारण एक सीमा से अधिक सिकुड़ जाता है तो

अचानक धमाके के साथ उसमें विस्फोट हो जाता है। इस धमाके से तारे की चमक अचानक कोई दस करोड़ सूर्यों के बराबर हो जाती है। इस तरह से विस्फोटिक होते तारे को अधिनवतारा यानी सुपरनोवा कहते हैं और इस विस्फोट को पुपरनोवा विस्फोट की संज्ञा दी जाती है।''

सूरज और रोहिणी दोनों को इस रोचक चर्चा में बड़ा आनंद आ रहा था। रोहिणी ने पूछा, ''चाचाजी, आपने पहले हमें लाल दानव तारों और फिर सफेद बौने तथा न्यूट्रॉन तारों के बारे में बताया।

आप तो आसमान के जादुई पिटारे से एक के बाद एक सघन पिंड निकालते ही जा रहे हैं। क्या कोई और पिंड भी बचा है चाचाजी?'' जवाब में परेश बोले, ''धीरज-धरो रोहिणी। यह आसमान का जादू है, सिर पर चढ़कर बोलता है। हां, इन पिंडों जिनकी हमने चर्चा की, से भी अधिक सघन पिंड पाए जाते हैं जिन्हें ब्लैक होल या कृष्ण विवर कहते हैं। इन पिंडों में इतना अधिक गुरुत्वाकर्षण मौजूद होता है कि पदार्थ और विकिरण सभी कुछ ये अपने अंदर आत्मसात कर लेते हैं। इनसे होकर कुछ भी बाहर नहीं आ सकता, प्रकाश की किरणें भी नहीं। तभी ब्लैक होल हमारे लिए अदृश्य बने रहते हैं।''

रोहिणी ने पूछा, ''चाचाजी, ब्लैक होल बनने तक की कहानी आपने बता दी। यह बताइए कि किसी तारे की अंतिम परिणति यानी मृत्यु न्यूट्रॉन तारे के रूप में होगी या ब्लैक होल के रूप में यह किस बात पर निर्भर करता है?

जवाब में परेश बोले, ''रोहिणी, जिस तारे का आरंभिक द्रव्यमान 2-3 सूर्यों के द्रव्यमान से अधिक होता है, उसकी अंतिम परिणति न्यूट्रॉन तारे के रूप में होती है। लेकिन, जिस तारे का आरंभिक द्रव्यमान 3-4 सूर्यों के द्रव्यमान से अधिक होता है, उसकी मृत्यु ब्लैक होल या कृष्ण विवर के रूप में होती है।''

अब सूरज ने मुंह खोला, ''वाह! चाचाजी, आपने इतने आसान तरीके से लाल दानव तारे, सफेद बौने तारे, न्यूट्रॉन तारे तथा ब्लैक होल के बारे में हमें समझा दिया। अब ब्लैक होल का पहला चित्र लेना कैसे संभव हुआ यह बताइए।''

जवाब में परेश बोले, ''सूरज काफी रात हो गई है। अब नीचे चलते हैं। दादाजी भी हम सबका इंतजार कर रहे होंगे। कल सुबह तुम लोगों को ब्लैक होल का पहला चित्र कैसे उतारा गया इस बारे में बताऊंगा।''

अगले रोज सुबह नाश्ता के बाद परेश चाचा सूरज और रोहिणी दोनों के साथ फिर से चर्चा के लिए बैठे। सूरज और रोहिणी दोनों ही बड़े खुश लग रहे थे। उन्हें देखकर परेश बोले, ''सूरज और रोहिणी, तुम दोनों के चेहरों से खुशी टपक रही है- मुझे यह देखकर बड़ा अच्छा लग रहा है।''

राहिणी बोली, ''हां, चाचाजी। कल आपने जो बताया उससे हमें बड़ा मजा आया। रात सपने में भी मुझे ब्लैक होल ही नजर आ रहा था।''

''ब्लैक होल का पहला चित्र लेना 10 अप्रैल, 2019 को 'इवेंट होराइजन टेलीस्कोप' या ईएचटी नामक परियोजना द्वारा ही संभव हो पाया है। इस परियोजना के साथ 200 से अधिक शोधकर्ता जुड़े थे। इससे निदेशक हैं डॉ. रौफर्ड एस. डोलमैन। ईएचटी परियोजना में छह महाद्वीपों में स्थित विश्व की आठ विशाल रेडियो दूरबीनों की मदद ब्लैक होल का पहला चित्र लेने के लिए ली गई।''

रोहिणी ने पूछा, ''आठ विशाल रेडियो दूरबीन!!! चाचाजी। जरा संक्षेप में इनके बारे में बताइए।''

जवाब में परेश बोले, ''ठीक है रोहिणी, इन दूरबीनों के बारे में बताता हूं। इनमें से दो-दो दूरबीनें तो हवाई द्वीप और चिली में स्थित

हैं। इन चार दूरबीनों के अलावा एक-एक दूरबीन अरिजोना, मैक्सिको, अंटार्कटिका तथा स्पेन में लगे हैं।''

सूरज ने पूछा, ''चाचाजी, बाकी सब तो ठीक है। लेकिन, अंटार्कटिका में दूरबीन?''

परेश, ''हां सूरज, अंटार्कटिका में स्थापित इस दूरबीन का नाम है साउथ पोल टेलीस्कोप। अब तुम दोनों आगे सुनो। वैज्ञानिकों की रुचि दो कृष्ण विवरों यानी ब्लैक होल्स के चित्र लेने की थीं। एक तो हमारी आकाशगंगा मंदाकिनी के केंद्र में स्थित अत्यधिक द्रव्यमान वाला यानी सुपरमैसिव ब्लैक होल और दूसरा एम-87 (मोसिए-87) या एनजीसी 4456 नामक मंदाकिनी के लगभग केंद्र में स्थित एक और सुपरमैसिव ब्लैक होल।''

रोहिणी ने पूछा, ''चाचाजी, आप दो ब्लैक होल की बात कर रहे हैं। लेकिन 10 अप्रैल को तो केवल एक ब्लैक होल का ही चित्र जारी किया गया।''

जवाब में परेश बोले, ''तुमने ठीक कहा रोहिणी। आशा तो यही थी कि 10 अप्रैल को हमारी आकाशगंगा मंदाकिनी के केंद्र में स्थित ब्लैक होल का चित्र जारी किया जाएगा। लेकिन, खगोलविदों ने पहले एम-87 के केंद्र में स्थित ब्लैक होल का चित्र ही जारी किया।''

सूरज बोला, ''हम समझ गए चाचाजी कि 10 अप्रैल को जारी चित्र एम-87 नामक मंदाकिनी के केंद्र में स्थित ब्लैक होल का है। इस मंदाकिनी के बारे में हमें कुछ बताइए।''

जवाब में परेश बोले, ''ठीक है सूरज, बताता हूं। एम-87 नामक मंदकिनी कन्या महागुच्छ यानी वर्गो सुपरक्लस्टर में स्थित है। यह मंदाकिनी हमसे करीब 5 करोड़ 30 लाख प्रकाश वर्ष दूर है। प्रकाश वर्ष तो तुम लोग जानते ही हो। प्रकाश द्वारा एक वर्ष में तय की गई दूरी को ही प्रकाश वर्ष कहते हैं। यह लगभग 95 खरब किलोमीटर के बराबर होता है।''

रोहिणी ब्लैक होल के चित्र के बारे में एक बात और स्पष्ट कर दूं कि यह चित्र ब्लैक होल के 'इवेंट होराइजन' का है। यह वह क्षेत्र है जहां ब्लैक होल की परिसीमा समाप्त होती है। वैसे तो ईएचटी परियोजना से जुड़े 200 से अधिक शोधकर्ताओं में कुछ महिला खगोलविद् भी थीं, लेकिन इस खोज के साथ एक महिला का नाम विशेष रूप में जुड़ा है जो विश्वभर में मशहूर हो गई- उनका नाम है 'कैथरीन बाउमैन'। ब्लैक होल की पहली तस्वीर लेने में कैथरीन का महत्वपूर्ण योगदान होने के बावजूद वह एक खगोलविद् नहीं है। डेटा एकत्र करने में भी उनका कोई योगदान नहीं था। खगोलविदों द्वारा सन् 2017 में एकत्र किए गए डेटा को एक सार्थक और उपयोगी तस्वीर में बदलने के लिए कैथरीन ने एक विशेष कंप्यूटर प्रोग्राम लिखा। इस प्रोग्राम द्वारा उन्होंने एकत्रित डेटा के उपयोगी अंशों को पहचाना, बाकी अंशों को नकार दिया। इस प्रकार ब्लैक होल का पहला चित्र लेने में कैथरीन बाउमैन की महत्वपूर्ण भूमिका रही।''

कहकर रुक गए परेश। सूरज और रोहिणी दोनों के चेहरों पर प्रसन्नता के भाव थे। यह देखकर परेश को बड़ा सुकून मिला। बोले, ''सूरज और रोहिणी, अब तुम दोनों को ब्लैक होल और उनके पहले चित्र के बारे में इतनी जानकारी मिल गई है कि इस पर अपने-अपने स्कूल की पत्रिका के लिए लेख लिख सकते हो।

दोनों एक साथ बोले, ''आपने बड़ा अच्छा सुझाव दिया चाचाजी।

हम दोनों ही इस विषय पर लेख लिखकर अपने-अपने स्कूल की पत्रिका में छपवाएंगे। छपने पर लेख की कॉपी आपको अवश्य भेजेंगे।'' ❑

-43, देशबंधु सोसाइटी 15,
पटपड़गंज, दिल्ली-92

चमत्कारी दोस्त

–मधु पंत

आज से लगभग एक सौ वर्ष पुरानी बात है, मैंने और मेरे जुड़वा भाई ने इस दुनिया में अपनी आंखें खोलीं। तब हम दोनों के अलावा हमारी जाति का कोई भी अन्य सदस्य इस दुनिया में न था।... तब से आज तक हमने दिन दूनी, रात चौगुनी प्रगति कर अपने संबंधियों की संख्या इतनी बढ़ा ली है कि शायद हमारी सही-सही गिनती करना संभव ही नहीं है। मैं आपको आंकड़ों के झमेले में उलझाना नहीं चाहता पर मैं सच कह रहा हूं जनसंख्या-गणना करने से भी कठिन है हमारे बंधु की सही संख्या का अनुमान करना। आपको सचमुच में पापड़ बेलने पड़ जाएंगे, इस काम को करने में। आपने शायद मुझे पहचाना नहीं होगा। चलिए थोड़ा सा इशारा देता हूं-

जब हम दोनों जुड़वा भाइयों का जन्म हुआ था- एक कमरे में मुझे रखा गया था और पास के दूसरे कमरे में मेरा सहोदर था। मेरे जन्मदाता मेरे सामने बैठ कर अपने सहयोगी को आदेश दे रहे थे। वह सहयोगी मेरे जुड़वां भाई के सामने बैठा था। आदेश था "श्रीमान वाटसन्! मेरे पास आइए, मुझे आपकी जरूरत है।"

कुछ-कुछ समझ में आया कि मैं कौन हूं?... या अब भी नहीं समझे? चलिए थोड़ा इशारा और करता हूं। मेरे जन्मदाता का नाम था अलेक्ज़ेन्डर ग्राहम बेल। हां... हां... हां... अब तो समझ गए ना? आपने ठीक पहचाना मैं हूं टेलीफोन..... आज की आधुनिक दुनिया का एक ऐसा चमत्कारी दोस्त जो हर समय आपके काम आता है, आपका साथ निभाता है और जिसने पूरी दुनिया को आपके साथ जोड़ दिया है। अगर तब मुझे पता होता कि मेरा समुदाय इतना विशाल हो जाएगा और मैं इतनी तरक्की कर लूंगा, तो शायद मैं तब खूब इतराता और गा-गा कर पूछता,

"ओ अनजानो! मुझे पहचानो!

मैं हूं कौन?

टेलीफोन, टेलीफोन।"

हां तो मैं अपने जन्म की घटना बता रहा था। सन 1876 में जब मेरा जन्म हुआ तो दो एक समान के यंत्र बनाए गए थे। एक कमरे में मुझे रखा गया था तथा दूसरे कमरे में मेरा भाई। 10 मार्च, 1876 का दिन था जब उत्तरी अमेरिका के बॉस्टन शहर में अलेक्जेंडर ग्राहम बेल, मेरे सामने बैठकर अपने सहयोगी वाट्सन से पहली बार दूरभाष यानी टेलीफॉन द्वारा बात कर रहे थे। तब यह बहुत कम दूरी तक आवाज़ को पहुंचाने वाला दुनिया का सबसे पहला दूरभाष यंत्र था। तब की दुनिया आज से बिल्कुल अलग थी। तब बिजली का प्रयोग यदा-कदा ही होता था, कारों की खोज नहीं हुई थी। एक जगह से दूसरी जगह समाचार भेजने का तरीका पत्राचार ही था। बहुत जरूरत के समय तार द्वारा सूचना भेजी जाती थी। चिट्ठियां पहुंचने में कई दिन या हफ्ते भी लग जाते थे। तार भेजने के लिए किसी व्यक्ति को स्वयं तारघर तक जाना पड़ता था जो कई-कई किलोमीटर दूर होते थे। तार के संदेश में हर शब्द के लिए पैसे लगते थे इसलिए कम से कम शब्दों में तार द्वारा सूचना भेजी जाती थी। आज की तरह तुरंत सूचना देना, हाल-चाल पूछना लंबे समय तक बातचीत करके एक-दूसरे की खबर जानना तब सपने जैसी बात थी। लेकिन तब से अब तक हमारी आश्चर्यजनक उन्नति हुई है।

अपनी उन्नति की गाथा क्या सुनाऊं? आप खुद ही जानते हैं कि अब मैं घर-घर में पहुंच चुका हूं। जब मेरा जन्म हुआ था, उसके बाद केवल चार वर्षों में ही अमेरिका में टेलीफोन की संख्या साढ़े हजार से ऊपर हो गई थी। हालांकि तब बात करना इतना सरल नहीं था जितना आज है। तब टेलीफोन द्वारा बात करने के लिए एक टेलीफॉन ऑपरेटर की सहायता ली जाती थी। टेलीफॉन डायरेक्टरी जैसी तब कोई चीज़ न की। तुरंत डायल करने की सुविधा भी दूर की बात थी। बेचारे टेलीफोन ऑपरेटरों को अपने स्थानीय टेलीफोन ग्राहकों के नाम याद रखने पड़ते थे। एक मज़ेदार बात बताऊं? टेलीफोन में नंबर द्वारा पहचान किए जाने की बात एक डाक्टर को सूझी थी। एक डॉक्टर को एक महामारी के समय यह सूझा कि यदि ऑपरेटर ही बीमार पड़ जाएगा तो टेलीफोन आपरेटर को लोगों के नाम, पते तो मालूम ही न होंगे। तब उस डॉक्टर ने सुझाव दिया कि यदि नामों के बदले टेलीफोन की पहचान नंबरों द्वारा हो तो कोई भी आपरेटर नंबर मिला कर टेलीफोन द्वारा संपर्क करा पाएगा। तब से ही टेलीफोनों को नंबर दिए जाने लगे।

मेरे जन्म के लगभग चालीस वर्षों के बाद न्यूयॉर्क से सेनफ्रांसिस्को तक की टेलीफोन लाइन बनी। इस काम के लिए हजारों कामगारों ने पूरे एक साल तक रात-दिन मेहनत की। पैदल चल-चल कर और घोड़ों की सवारी द्वारा आंधी, पानी, तूफानों के बीच वे काम करते रहे। इस बड़े काम में चौदह हजार मील की लंबाई के तांबे के तारों का प्रयोग हुआ था और अमेरिका के पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक उस तार को पहुंचाने के लिए एक लाख तीस हजार टेलीफोन के खंभे गाड़े गए थे।

मेरे जन्म के लगभग चालीस वर्षों बाद मेरे जन्मदाता और उनके सहयोगी वाट्सन में फिर से टेलीफोन द्वारा बात हुई। यह दूसरा ऐतिहासिक क्षण था। जब पास के दो कमरों के बीच संदेश प्रसारित नहीं हुआ था बल्कि न्यूयार्क और सेनफ्रांसिस्को की हजारों मील की दूरी को मेरे दो सहयोगियों ने आपस में जोड़ दिया था। पिछली बार मेरे जन्मदाता, अलेक्जेन्डर ग्राहम बेल ने मात्र एक वाक्य द्वारा वाट्सन तक अपनी बात पहुंचाई थी, जब कि इस बार न्यूयार्क में बैठे ग्राहम बेल और कैलिफोर्निया में बैठे वाट्सन के बीच लगभग तेईस मिनटों तक बात

हुई और दोनों स्थानों के स्थानीय लोगों की भीड़ इस अद्भुत करिश्मे को देखने को एकत्रित हो गई थी।

इसके बाद तो मैं पूरे विश्व में छा गया। आज दुनिया में पंद्रह करोड़ से भी अधिक टेलीफोन लाइनें हैं और इस संख्या में प्रतिदिन लगभग एक हजार से भी अधिक लाइनों की बढ़ोत्तरी होती जाती है।

आपको अपने जन्म के समय की एक मजेदार बात बताता हूं। जब मेरा जन्म हुआ, मेरे जन्मदाता ने सोचा कि टेलीफोन में बात करने के लिए लोग हलो-हलो नहीं बल्कि होए-होए द्वारा संबोधन करेंगे। कल्पना कीजिए कि यदि आज अचानक कोई हैलो-हैलो के स्थान पर होए-होए कहने लगे तो क्या कुछ इस प्रकार का वार्तालाप न होगा?

पहली आवाजः होए... होए.. होए.. होए...

दूसरी आवाजः जाने कौन पागल बोल रहा है होए-होए, चुप ही नहीं होता। ओए, होए, होए मजाक करना छोड़ और काम की बात कर-

पहली आवाजः होए होए मैं मज़ाक नहीं कर रहा जी। होए-होए गुस्सा न करो जी एक खास बात बतानी है।

दूसरी आवाजः चुप कर होए होए की दुम! मैं इतना बुजुर्ग आदमी हूं। तू बड़ों से मजाक करता है। तेरी रिपोर्ट थाने में कर दूंगा तब छठी का दूध याद आ जाएगा।

पहली आवाजः होए होए महाशय! होए-होए आप सुन रहे हैं ना! आपको एक सूचना देनी है।

दूसरी आवाजः चुप कर होए-होए के बच्चे! और कुछ नहीं सूझा तो सरकारी सम्पत्ति का दुरूपयोग करने के लिए होए-होए करना शुरू कर दिया। अब तू चाहे रोए या धोए मुझे नहीं सुननी तेरी होए-होए।

और यह कह कर शायद व दूसरा व्यक्ति टेलीफोन पटक देगा या अपना सिर पकड़ कर बैठ जाएगा। उधर पहले फोन करने वाला भी चक्कर में पड़ जाएगा कि आखिर उसकी गलती क्या थी? चलिए यह तो अच्छा हुआ कि होए होए के स्थान पर हैलो-हैलो कहने का प्रचलन हो गया। लेकिन एक बात तो गौर करने वाली है जो दूसरे फोन वाले बुजुर्ग व्यक्ति कह रहे थे कि आजकल हम टेलीफोन जैसी सार्वजनिक सुविधा का दुरूपयोग करते हैं। बिना कारण घंटों तक गुफ्तगू करते रहेंगे और टेलीफोन लाइन को व्यस्त रखेंगे। सरकारी टेलीफोन का दुरूपयोग तो आम बात है। जब तक आप सब यह ध्यान नहीं रखेगे कि मेरा प्रयोग अपनी व दूसरों की सुविधा के लिए हो आप मेरे सच्चे मित्र नहीं बन पाएंगे।

मैं आज के आधुनिक युग में, सचमुच में आपका चमत्कारी दोस्त हूं। मेरे बिना जीवन की कल्पना की अधूरी है। अब तो मैं मोबाइल फोन के रूप में आपकी मुट्ठी में समा गया हूं। चलते-फिरते, उठते-बैठते, सोते-जागते, चौबीसों

घंटे एक साये की तरह में आपके साथ रहता हूं। कोई भी आपदा आ जाए, मैं हमेशा मदद के लिए तैयार हूं। दुर्घटना हो जाए, कोई बीमार पड़ जाए तो डॉक्टर या पुलिस को बुलाने में तुरंत आपकी मदद करता हूं। ऑफिस के कई काम दूर रहते हुए भी मेरी सहायता से सहूलियत से निपटाए जा सकते हैं। दूकान से सामान मंगाना हो तो मैं, बिजली पानी का बिल चुकाना हो तो मैं, बैंक की जानकारी लेनी हो तो मैं, क्रिकेट का हाल जानना हो तो मैं, मौसम की जानकारी लेनी हो तो भी मैं, मैं ही हूं सबका सहारा। बूढ़े माता-पिता का तो मैं वैसा सहारा हूं जैसा अंधे की लाठी। दूर-दराज की जगहों में रहने वाले नौकरी-पेशा लोगों के संबंधियों को मैं ही हमेशा दिलासा देता हूं। जब भी बच्चों की याद सताए मुझे याद कर लिया। पड़ोस के शर्मा जी के बेटे का तो इंटरव्यू ही टेलीफोन द्वारा हुआ। तत्काल विदेश की नौकरी मिल गई जाते-जाते वह अपना मोबाइल अपनी मां को दे गया कि जब भी आप चाहें मुझसे संपर्क करें, मैं आपकी आवाज सुनने को व्याकुल रहूंगा। तब से मैं श्रीमती शर्मा जैसी अनेक मांओं की आंख का तारा बन गया हूं। मीना भी मुझे हमेशा अपने पास रखती है। पिछली बार उसके भाई ने राखी पर उसे मोबाइल दिया था। इस मोबाइल ने एक बस दुर्घटना में तुरंत सहायता पाने में मदद की थी। तब से मीना मेरे बिना घर के बाहर कदम भी नहीं रखती। आपको एक और नई और ताजा सूचना भी दे रहा हूं अब ऐसे टेलीफोनों का निर्माण भी हो रहा है जो साइन भाषा को समझ कर उसे ध्वनि में परिवर्तित कर देंगे ताकि वे लोग जो मूक और बधिर हैं, अपनी बात दूसरों तक पहुंचा सकें। इसी प्रकार दूसरों की कही बात को वे इशारों द्वारा मोबाइल के पर्दे स्क्रीन पर प्रदर्शित कर सकेंगे। इस विषय में वाशिंगटन यूनिवसिटी मे शोध चल रहा है।

देखा आपने! मैं सचमुच में आप सबका चमत्कारी दोस्त हूं। क्या बच्चे, क्या बूढ़े क्या शिक्षक क्या विद्यार्थी, क्या महिलाएं क्या पुरूष, क्या नेत्रहीन और क्या मूक और बधिर क्या नेता क्या अभिनेता, क्या डॉक्टर क्या बीमार मैं सबका साथ निभाने वाला और आपकी सुविधा के लिए प्राण न्यौछावर करने वाला दोस्त हूं। ... पर बदले में आप मुझे क्या देते हैं? मात्र तिरस्कार और मेरा दुरूपयोग। घंटों-घंटों तक बेवजह लंबी बातें कर, मेरे कान खा जाते हैं आप। गुस्सा आ जाए तो मुझे पटक कर, मुझ पर अपना गुस्सा निकाल देते हैं। मुझे तब भी बहुत बुरा लगता है जब आप झूठ बोलने के लिए मेरा सहारा लेते हैं। घर पर होते हैं पर कहलवा देते हैं कि आप घर पर नहीं हैं। कोई मित्र वास्तव में परेशानी में होता है तो उसकी सहायता करने में के स्थान पर झूठा बहाना बना देते हैं। दूसरों से सहानुभूति पाने के लिए मगरमच्छ के आंसू बहाने तक से नहीं चूकते। भला सोचिए मेरे जनक, मेरे जन्मदाता, मेरे पिता, जिनका मैं सदैव ऋणी हूं उन्होंने वर्षों की तपस्या के बाद मेरा निर्माण किया था। उनकी बेल कम्पनी में हमेशा आर्थिक अभाव रहता था पर उन्होंने कभी हार नहीं मानी। उन्होंने त्याग और समर्पण की जिस भावना से मेरा निर्माण किया और जिनके आशीर्वाद से मेरे रूप में उत्तरोत्तर निखार आता जा रहा है, उनके समर्पण और उनकी भावना का आपको सदैव सम्मान करना चाहिए। आप के ऐसा करने से आपका यह चमत्कारी दोस्त अत्यंत संतुष्ट होगा और आपका अत्यंत ऋणी रहेगा। ❑

-221, दीवूड चेस, निर्वाण कंट्री, सेक्टर-50, गुरुग्राम, हरियाणा

जटायु

–राज शेखर

रिम्मी उस विशाल प्रतिमा को देखकर आश्चर्यचकित और स्तब्ध थी। वह आकृति उस महान गिद्ध की थी, जिसने माता सीता को रावण के चंगुल से छुड़ाने का प्रयास किया था। रावण ने उसके पंख काट दिए थे और वह घायल होकर एक पहाड़ी पर गिर गया था। केरल के कोल्लम जिले के लोगों की वर्षों से यही मान्यता है कि जटायु यहीं गिरा था। इस कारण वह जगह वहां के लोगों के बीच एक धार्मिक स्थल के रूप में प्रसिद्ध है।

गर्मी की छुट्टी में रिम्मी अपने माता-पिता के साथ केरल-भ्रमण के लिए आई हुई थी। उस करुण घटना के हजारों साल बाद रिम्मी उस गिद्ध की प्रतिमा को चदायमंगलम पहाड़ी पर देख रही थी, जो अब 'जटायु अर्थ पार्क' के रूप में विकसित हो चुका है, जहां हजारों पर्यटक प्रत्येक वर्ष आते हैं।

रिम्मी ने अपनी मां से पूछा– "मां! इस पक्षी की क्या कथा है?"

उसकी मां ने बताना प्रारंभ किया कि यह कथा उस जटायु की है, जिसने मायावी राक्षस रावण से जमकर लोहा लिया था। वह रामायण में वर्णित उस जटायु-प्रकरण के बारे में विस्तार से बता रही थी, तभी एक तेज हवा का झोंका आया। रिम्मी ने मुड़कर देखा तो अचंभित रह गई। उसने उस शिलावाले पक्षी की सजीव आकृति देखी। इतना विशाल रूप देखकर रिम्मी डर भी गई। उसे घबराया हुआ देखकर उस पक्षी ने कहा– "डरो नहीं। मैं पक्षीराज जटायु हूं। आज मैं तुम्हें आकाश की सैर कराऊंगा। मुझे पता है कि बच्चे हमारी तरह हवा में उड़ना चाहते हैं।"

"लेकिन मेरे तो पंख ही नहीं हैं!" रिम्मी ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"तो क्या हुआ? मेरे तो हैं। मेरी पीठ पर बैठो और मुझे कसकर पकड़ लो।"

और यह कहकर जटायु ने रिम्मी को अपनी पीठ पर बैठाया और वायु गति से उड़ गया। वह बादलों के ऊपर जाकर कलाबाजियां खाने लगा। कितना खूबसूरत नज़ारा था। आसमान में एक नहीं ढ़ेर सारे इंद्रधनुष बन रहे थे और उन रंग-बिरंगी किरणों के बीच जटायु का गोते लगाना बेहद रोमांचक था। उसके मन में भी ख्याल आया... काश मेरे भी पंख होते तो कितना मजा आता। उसी वक्त जटायु ने रिम्मी से पूछा-

"क्या तुम भी गोते लगाना चाहोगी रिम्मी?" रिम्मी को इसका जवाब हां-ना में देने का वक्त भी नहीं मिला और जटायु ने उसे झटका देकर अपनी पीठ से गिरा दिया। रिम्मी बहुत तेजी से नीचे गिर रही थी, लेकिन उसने देखा कि जटायु की तरह उसके भी पंख निकल आए थे। एक पहाड़ी से टकराने के पहले ही वह संतुलित होकर ऊपर की ओर उड़ने लगी और जटायु के पास पहुंच गई।

"कैसा लग रहा है मेरे दोस्त?" जटायु ने पूछा।

जटायु का यह दोस्ताना अंदाज रिम्मी को बहुत अच्छा लगा। उसने कहा- "बहुत मजा आ रहा है।" यह कहकर रिम्मी ने एक लंबा गोता लगाया। बहुत देर तक दोनों में होड़ लगी रही है कि कौन हवा में ज्यादा कलाबाजियां खा सकता है।

दोनों थककर एक बादल पर बैठ गए और सुस्ताने लगे। बादल भी धीरे-धीरे हवा के झोकों के साथ चल रहा था। वहां से पृथ्वी का नज़ारा बहुत ही सुंदर था। पृथ्वी पर सभी घर, पहाड़, नदी, झील आदि छोटे और मनमोहक लग रहे थे। रिम्मी ने पूछा- "आप लोग इतनी लंबी उड़ान कैसे भर लेते हैं?"

जटायु ने बताया- "ये तो कुछ भी नहीं है। हमारे पूर्वज सम्पाती और जटायु थे। एक बार उन दोनों के बीच सूर्य को स्पर्श करने की होड़ लगी। इसके लिए उन्होंने लंबी उड़ान भरी। जब सूर्य के तेज से जटायु जलने लगे तब सम्पाती ने अपने पंखों से उन्हें ढककर सुरक्षा प्रदान की, लेकिन इस प्रयास में सम्पाती के पंख जल गए और वे समुद्रतट पर गिरकर चेतना शून्य हो गए। कहते हैं कि चंद्रमा नामक मुनि ने उन पर दया करके उनका उपचार किया और कहा कि जब त्रेता में तुम्हें सीता की खोज करनेवाले बंदरों के दर्शन होंगे तब तुम्हारे पंख फिर से उग आएंगे।"

"अच्छा! आपके पूर्वज का नाम जटायु था और आपका भी नाम जटायु है।" रिम्मी ने प्रश्न किया।

"हमारे पूर्वज जटायु हमारे समुदाय के लिए प्रेरणास्रोत रहे हैं। इसलिए हमारे यहां हर राजा इस उपनाम को धारण कर गौरवान्वित महसूस करता है।"

जटायु के पास अनेकों साहसिक कहानियां थीं। कुछ कहानियां सुनने के बाद रिम्मी ने कुछ खाने की इच्छा व्यक्त की। इसपर जटायु ने कहा- "चलो मैं तुम्हें अपने देश ले चलता हूं।" वे समुद्र के बीच एक सूनसान टापू पर गए। वहां चारों तरफ गिद्ध ही गिद्ध थे। किसी के सिर पर बाल नहीं थे। सभी गंजे थे। मानव जाति का कहीं कोई नामोनिशान नहीं था। सभी गिद्ध रिम्मी को अजीबोगरीब नजर से देख रहे थे।

वे सभी एक विचित्र प्रकार की आवाज निकाल रहे थे और अपने पंख फड़फड़ाकर इधर से उधर दौड़ रहे थे। शायद वे अपने राजा जटायु का स्वागत कर रहे थे। गिद्धों के सभी बच्चे रिम्मी के साथ चल रहे थे। जटायु ने इशारों में ही सभी को निर्देश दिया कि कोई रिम्मी को तंग नहीं करे।

वह टापू काफी हरा-भरा था। ऊंचे-ऊंचे पेड़ थे। उन पेड़ों पर सैकड़ों ट्री हाउस बने थे, जिनमें वे गिद्ध रहते थे। रिम्मी ने आश्चर्यचकित हो जटायु से कहा-

"आजतक हमने केवल किताबों में गिद्ध देखे थे। इतने सारे गिद्ध अपनी आंखों से पहली बार देख रही हूं।"

इस पर जटायु ने कहा-

''अब हमलोगों ने यहां पर ही अपना बसेरा बना लिया है। इसके आसपास दूर तक मनुष्य जाति की कोई सभ्यता नहीं है। यहां कोई नहीं आ सकता। अब हमलोगों ने मृतजीवों को भी खाना छोड़ दिया है। कंद-मूल एवं फल-फूल ही हमारा मुख्य आहार हो गया है।''

''मगर आपलोग यहां पर क्यों रहते हैं?'' रिम्मी ने पूछा।

''क्योंकि हमलोग मनुष्य की बर्बरता के शिकार हैं। उन्होंने इसके बारे में कभी नहीं सोचा कि हम प्रकृति के कितने बड़े मित्र हैं। उनसे यह समझने में जाने-अनजाने बड़ी भूल हुई है।''

''वह कैसे?''

''हमारी प्रजाति मृतोपजीवी पक्षी है। हम मृत पशु के शरीर पर निर्भर रहते हैं। हमारा पाचनतंत्र बहुत मजबूत होता है, जिससे हम रोगाणुओं से परिपूर्ण सड़ा-गला मांस भी पचा सकते हैं। हमलोग सालाना लगभग 12 लाख टन मांस समाप्त कर दिया करते थे। कुछ दशकों पहले तक पूरे भारत में हमारी आबादी 4 करोड़ थी जो अब सिमट कर 4 लाख ही रह गई है।''

''ऐसा क्यों हुआ?''

''कुछ सालों से भारत में लोग अपने मवेशियों के लिए डाइक्लोफेनेक नामक दर्दनिवारक दवाई का प्रयोग करते आ रहे हैं। पशुओं के मरने के बाद उनको खाने पर यह दवाई हमारी प्रजाति के शरीर में पहुंच जाती है और उनकी आंतें क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और उनकी मृत्यु हो जाती है।''

''अच्छा! तो ये बात है। इसलिए आपके समुदाय के प्राणी हमें कभी दिखते ही नहीं। क्या आपलोग कभी वापस हमारे समुदाय में नहीं आएंगे?''

''हमलोग आ सकते हैं, लेकिन उसके लिए हमारे लायक स्थिति बनानी होगी। हमें कोई नुकसान न हो, इसके लिए प्रयास करना होगा। लोगों को ये समझना होगा कि पारिस्थितिकी तंत्र या ईको सिस्टम के लिए हमारा अस्तित्व में होना कितना जरूरी है। हमारी जनसंख्या कम होने से भोजन श्रृंखला की एक कड़ी समाप्ति के कगार पर पहुंच गई है।''

ये सब बातें हो ही रही थीं कि जटायु ने कहा- ''अरे बातों ही बातों में भूल ही गया कि तुम्हें भूख लगी है। चलो बगीचे में चलकर कुछ खाते हैं।''

बगीचे में वे सब गए। वहां खजूर, अंजीर, अखरोट एवं कई प्रकार के अन्य जंगली फलों के पेड़ थे, जिन्हें रिम्मी ने पहले कभी नहीं देखा था। वहां पहुंचकर जटायु ने कहा- ''रिम्मी! तुम्हें खुद ही फल तोड़कर खाने हैं।''

जटायु ने जैसे-जैसे कहा, रिम्मी ने वैसे-वैसे किया। खूब छककर फल खाए। इतने स्वादिष्ट फल इससे पहले उसने कभी नहीं खाये थे। पहाड़ों से गिरते हुए झरने में मुंह लगाकर पानी पीने का अनुभव तो बेजोड़ था। उसके बाद रिम्मी ने देखा कि सभी गिद्ध अपने चोंच में फल-फूल लेकर एक जगह एकत्रित हो रहे हैं। जटायु ने कहा- ''चलो, अब प्रार्थना का समय हो गया। तुम भी कुछ फल और फूल ले लो।''

वहां एक ऊंचा टीला था। उस टीले के ऊपर एक बड़ा-सा चट्टान था। उसके पास एक बूढ़ा-सा गिद्ध बैठा था। जटायु ने उस जगह के बारे में बताया- ''हमलोग रोज शाम में यहां पर जमा होते हैं। यह चट्टान जटायु और भगवान राम की मित्रता का प्रतीक है। यह मित्रता दर्शाता है कि इस पृथ्वी पर मनुष्य के साथ सभी जीव-जंतुओं का एक पारस्परिक संबंध होना कितना जरूरी है। ये पुरोहित रोज जटायु की कथा सुनाते हैं जिससे हमारे समुदाय को यह याद रहे कि हमने मानव समाज की हमेशा मदद की है। आज भले ही परिस्थितियां हमारे अनुकूल नहीं हैं, लेकिन अपने कर्त्तव्यों और आदर्शों को कभी नहीं भूलना है। एक-न-एक दिन मानव को अपनी भूलों का एहसास जरूर होगा।''

उस बूढ़े गिद्ध ने कथा कहना

प्रारंभ किया– "भारत के राजा दशरथ के मित्र थे जटायु। जब वनवास के समय राम पंचवटी में पर्णकुटी बनाकर रहते थे तब उनका परिचय राम से हुआ था। उसी समय से वे मित्र बन गए। जब रावण सीता का अपहरण कर आकाश मार्ग से ले जा रहा था तब सीता की करुण आवाज जटायु ने सुनी। जटायु ने रावण से जबरदस्त मुकाबला किया। उसने कहा कि दुष्ट राक्षस! एक असहाय स्त्री को कहां ले जा रहा है? मेरे जीते जी तुम ऐसा नहीं कर सकते। उसने अपने चोंच और पंजे से रावण के शरीर में कई जख्म कर दिए। उन जख्मों से खून की धारा बह निकली। रावण दर्द से छटपटा गया। लेकिन अंत में रावण ने तलवार से जटायु के पंख काट दिए।"

तभी रिम्मी जोर से चिल्लायी– "जटायु को मत मारो! जटायु को मत मारो!"

रिम्मी की मां ने उसे झकझोरते हुए पूछा– "क्या हुआ रिम्मी?"

रिम्मी ने चारों तरफ देखते हुए कहा– "मां! तुम्हारी कहानी सुनते-सुनते लगता है कि मैं पक्षीराज जटायु की दुनिया में चली गई। वह दुनिया बेहद यथार्थ थी।"

तभी पार्क में अपनी मां के साथ चलते-चलते उन दोनों ने एक पानी से भरा तालाब देखा। मां ने रिम्मी को बताया– "ऐसा मानते हैं कि घायल अवस्था में जटायु ने उस पानी को पीकर अपने आपको जीवित रखा ताकि श्री राम को वह सीताजी का विवरण दे सकें। जब श्री राम सीताजी को खोजते हुए वहां पहुंचे तब जटायु ने अपने मरणासन्न स्थिति में भी अपने कर्त्तव्य का पालन किया और श्री राम की गोद में मोक्ष को प्राप्त किया।"

रिम्मी इस कहानी से काफी प्रभावित हुई। उसने मन ही मन संकल्प लिया कि वह भी जीव संरक्षण का प्रयास करेगी और अन्य बच्चों को इसके लिए प्रेरित करेगी। उसने गौर से एक बार फिर जटायु की प्रतिमा को देखा। उसने देखा कि उस प्रतिमा के ऊपर एक पक्षी दूर आसमान में मंडरा रहा है। ❑

–एच-1103, टीएनएआईएस हाउसिंग काम्पलेक्स, वेस्ट नटेशन नगर, विरूगमबाकम, चेन्नई, तमिलनाडु-600092

दवाई

–रामदरश मिश्र

दीपा नगर निगम के स्कूल में शिक्षिका थी। वह युवावस्था में ही विधवा हो गई थी। पहाड़-सा जीवन उसके सामने पड़ा था। उसे शुरू में लगा कि कैसे कटेंगे ये भारी-भारी दिन। फिर उसने अपने इकलौते बेटे की ओर देखा। उसने सोचा, जो होना था वह हो चुका, रोने-चीखने से तो वह वापस होगा नहीं। उसके पास दो सहारे तो हैं न- एक नौकरी, दूसरे उसका बेटा भुवन। बहुत-सी दुखियारी औरतें तो ऐसी होती हैं, जिनके पास कोई सहारा नहीं होता।

दीपा तो यों भी बहुत कोमल मन की औरत थी। परिस्थितियों ने उसे और भी कोमल और दयालु बना दिया। वह अपने दर्द को भूलकर और लोगों के दुःख-दर्द में शरीक हो गई। स्कूल के बच्चों और खासकर गरीब बच्चों के लिए उसके मन में अपार ममता थी और उनके लिए जो कर सकती थी, करती थी। दूसरी ओर उसने अपने बेटे भुवन को ऊंची से ऊंची और अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाने का प्रयत्न किया। उसने अपनी छोटी-सी आय में से ही ऊंची शिक्षा का खर्च वहन किया, फलस्वरूप एक दिन भुवन डॉक्टर बन गया।

भुवन एक बड़े अस्पताल में नौकरी करने लगा। जिस दिन उसे पहली तनख्वाह मिली, वह बहुत खुश था। तनख्वाह के पैसे मां के हाथों में सौंपते हुए उसने कहा, "मां, आज तुम्हारे आशीर्वाद से तुम्हारा बेटा कमाने लगा है। अब तुम नगर निगम की नौकरी छोड़कर आराम करो।"

दीपा तनख्वाह के पैसे हाथ में लिए खड़ी रही। फिर उसे लौटाते हुए बोली, "बेटा, ये पैसे तुम अपने नाम से बैंक में जमा करते रहो, तुम्हारे भविष्य के लिए काम आएंगे। और मैं नौकरी क्यों छोड़ दूं बेटा?"

"मां, अब अच्छा नहीं लगता कि तुम्हारा बेटा एक बड़े अस्पताल में नौकरी करता हो और तुम नगर निगम के एक छोटे स्तर के स्कूल में गरीब बच्चों के बीच बैठी रहो।"

"बैठी रहो? क्या मतलब है तुम्हारा बेटा? इसी स्कूल की मेरी नौकरी ने तुम्हें डॉक्टर बनाया है और इसी ने मुझे सहारा दिया है। इस स्कूल में जो बच्चे आते हैं, वे

हमें अपने देश की असली पहचान कराते हैं। बेटे, वे हमारा इम्तहान भी लेते हैं कि हम आदमी हैं कि नहीं। जिन लोगों के मन में गरीबों के लिए दया-धर्म नहीं होता, वे आदमी कहलाने के लायक नहीं होते। और मैं तो चाहती हूं बेटे कि तुम कुछ पैसे जमा करके किसी गरीब बस्ती में एक दवाखाना खोल दो।''

''गरीब बस्ती में? तुम भी खूब कहती हो मां! गरीब बस्ती में क्या मिलेगा?'' भुवन ने कहा। मां बोली, ''पैसा कम मिलेगा, लेकिन मन को संतोष तो मिलेगा कि तुमने जरूरतमंद आदमी का इलाज ही नहीं, उसकी सहायता भी की है।''

भुवन हंसा, जैसे उसे लग गया कि मां से बहस करना बेकार है। क्या करना है बहस करके, उसे जो अच्छा लगेगा, करेगा।

''बेटा, नौकरी करना ही काफी नहीं होता। हर नौकरी के साथ एक नैतिकता जुड़ी होती है। अब देखो, मैं शिक्षक हूं। मेरा काम है पढ़ाना। कक्षा में धनी बच्चे आते हैं कि गरीब, वे पढ़ते हैं कि नहीं, इसे देखने की जरूरत नहीं। बस, कक्षा में जाओ, उन्हें पढ़ा दो और तनख्वाह लो, सुखी रहो। लेकिन नहीं, एक शिक्षक का काम इतना ही नहीं होता। वह बच्चों का अभिभावक भी होता है। वह उनके निजी जीवन की समस्याओं के साथ भी अपने को जोड़ता है। और बेटे, डॉक्टर का पेशा तो और भी मनुष्यता का होता है। वह सेवा है, लेकिन डॉक्टरों ने सेवा को किनारे रख दिया है। बस, होड़ मची है कि कौन कितने तरीकों से कितना पैसा कमा सकता है। इससे आदमी की आत्मा को शांति मिलती है क्या?'' मां बोले जा रही थी।

भुवन सुन रहा था, लेकिन किस कान से सुन रहा था, कहना कठिन है।

दूसरे दिन मां स्कूल गई और भुवन अस्पताल। अस्पताल में किसी कारण छुट्टी हो गई तो भुवन घर लौट आया, लेकिन सोचा, चाभी तो मां के पास है और मां स्कूल में होगी। वह चाभी लेने के लिए स्कूल में पहुंच गया। मां अपने कमरे में बैठी हुई थी। भुवन उनके कमरे में गया और बोला, ''मां, आज छुट्टी हो गई। चाभी दो, घर जाऊं।''

मां ने कहा, ''थोड़ा बैठो बेटा, यहां की दुनिया को भी थोड़ा देखो।''

''नहीं मां, चाभी दो, यहां क्या बैठना?''

मां अपने पर्स में से चाभी निकाले इसके पहले ही कुछ बच्चे एक बच्चे को पकड़े हुए आए और बोले, ''मैडम, इसके पेट में दर्द हो रहा है। छटपटा रहा है बेचारा।''

दीपा के बैग में कुछ दवाएं थीं। पेट दर्द की भी दवा थी। उसने दवा निकालकर दी और कहा, दवा खाकर बेंच पर लेट जाओ।

दवा खाने के बावजूद कुछ फायदा नहीं हुआ, बल्कि दर्द बढ़ता ही गया। तब दीपा ने डांटकर कहा, ''पता नहीं तुम लोग क्या अवाट-बवाट खा लेते हो। क्या खाया था?''

वह लड़का चुप रहा।

दीपा ने फिर डांटकर पूछा, ''बोलता क्यों नहीं, क्या खाया था?''

बच्चे ने सहमते हुए कहा, ''मैडम कल शाम से ही कुछ नहीं खाया है।''

''क्यों?''

''घर में खाने को कुछ था ही नहीं।''

सुनकर दीपा स्तब्ध रह गई। उसने कहा, ''जहां रोटी चिकित्सा हो, वहां दवा क्या काम करेगी?'' उसने चपरासी को कुछ रूपये देकर कहा, ''जाओ, इसके लिए कुछ केले और डबलरोटी ले आओ।''

लड़के ने कुछ खाया। धीरे-धीरे उसके पेट का दर्द शांत हो गया और चेहरे पर हंसी दिखी।

दीपा लड़के को कक्षा में भेजकर देर तक यों ही बैठी रही। उसकी आंखों में आंसू आ गए।

भुवन यह सब देखता हुआ चकित-सा खड़ा था। फिर मां के पैरों पर झुक गया और बोला, ''मैं इनके बीच ही दवाखाना खोलूंगा मां।'' ❑

-आर-38, वाणी विहार, उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059

पर्यावरण बचाओ

–मनीषा

चिड़िया रानी, चिड़िया रानी,
बढ़ती गर्मी, घटता पानी।
गली–गली में ढूंढ रही हो,
बड़ी प्यास से जूझ रही हो।
बड़े घनेरे वृक्ष कट रहे,
तख्त–साज़ और भवन बने।
नदियां बन रही नाले सी,
बरसाती पानी कौन संभाले जी।

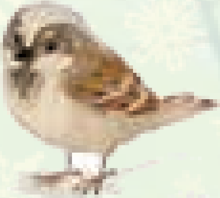

सूखी झीलें–सूखे ताल,
इंसा भी अब हुआ बेहाल।
दुनिया में मच रही तबाही,
हवा हो चली दमघोंटू जी।

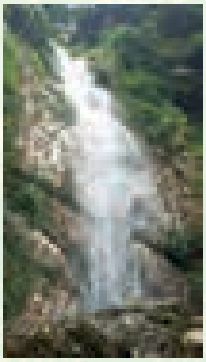

पत्ती–पत्ती सूख रही है,
चुनने को नहीं दाने जी।
सूरज, हवा, धरा और नदियां,
रहे नहीं अब सादे जी।
जंगल सारे लुप्त हुए,
दादा शेर भी सुस्त हुए।
कौव्वे–हिरन सब हैं बेहाल,
इंसा ने क्या किया कमाल।

गले प्यास से सूख चुके
अब किससे करें गिले।
दाना–पानी डालो भी,
जीवों को बचा लो जी।
पर्यावरण को बचा लो जी।।

–ग्रेटर नोएडा, जीबी नगर उ.प्र.–201308

विश्व पुस्तक दिवस 2019

प्रकाशन विभाग द्वारा 23 अप्रैल, 2019 को प्रकाशन विभाग की पुस्तक दीर्घा में सायं 4 बजे विश्व पुस्तक दिवस आयोजित किया गया। 1995 में हुई यूनेस्को की सभा में हर साल इसी तारीख को विश्व पुस्तक दिवस के रूप में मनाने का फैसला किया गया था। दरअसल, यह दिवस उस मूल्य का सम्मान है, जिसके जरिए लेखक और किताबें हमारे ज्ञान और विचारों को संपन्न बनाते हैं। इस अवसर पर प्रकाशन विभाग ने 'भविष्य में भारत में प्रकाशन की रूपरेखा' पर प्रेजेंटेशन भी प्रस्तुत किया, जिसकी अगुवाई नीलसन बुकस्कैन के डायरेक्टर (भारत और एशिया प्रशांत) श्री विक्रांत माथुर ने की। श्री माथुर ने भारत में प्रकाशन उद्योग से संबंधित महत्वपूर्ण विचार साझा किए और बाजार की जरूरतों, किताब के प्रकाशन से जुड़े नए तकनीकी पहलुओं, किताबों की पाठकसमूह को प्रभावित करने वाली आबादी यानि बाजार का दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले तुलनात्मक विश्लेषण पेश किया।

उन्होंने यह दिखाने के लिए आंकड़े भी पेश किए कि भारत में व्यापार के नजरिए से न सिर्फ कथा साहित्य (कहानी-उपन्यास वाली किताबें) और कथेतर यानी तथ्य तथा अकाल्पनिक लेखन से जुड़ा साहित्य अहम हैं, बल्कि उच्च शिक्षा और परीक्षा की तैयारी वाली किताबें भी प्रकाशन उद्योग का अटूट हिस्सा हैं। उन्होंने भारतीय भाषाओं में किताबों के प्रकाशन की जरूरत पर जोर दिया और कहा कि इससे जुड़े बाजार में काफी संभावनाएं हैं। उन्होंने इस सिलसिले में उदाहरण पेश करते हुए कहा कि अंग्रेजी किताबों के व्यापार खंड में वयस्क आबादी से जुड़ी कथेतर साहित्य की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा है, उसके बाद कथा साहित्य और बाल साहित्य है। भारतीय भाषाओं की किताबों के मामले में हिंदी की हिस्सा सबसे ज्यादा है और इसके बाद मलयालम और बांग्ला भाषाओं का योगदान है। उनका कहना था कि यह देखना भी जरूरी है कि किस तरह से किताबें सिनेमा के अलावा तेजी से वेब सीरीज़, टेलीविज़न सीरीज़ और डिजिटल प्लेटफॉर्म के लिए पसंद बनती जा रही हैं। गौरतलब है कि कहानियों के लिए सिनेमा का किताबों से लंबा रिश्ता रहा है। माथुर ने बताया कि डिजिटल प्रकाशन और किंडल पर किताबें पढ़ने का चलन जोर पकड़ रहा है। आंकड़ों के विश्लेषण और मौजूदा प्रचलन के जरिए उन्होंने यह भी बताया कि किस तरह से ऑडियो किताबों और ई-वर्जन का चलन तेजी से बढ़ रहा है। हालांकि, उनका यह भी कहना था कि छपी हुई किताबों का अस्तित्व बना रहेगा। कवि श्री मोइन शादाब ने श्रोताओं को किताबों और पढ़ने के शौक से जुड़ी कुछ कविताएं सुनकर सेमिनार का समापन किया। सेमिनार सफल रहा और इसमें विभिन्न आयु समूहों और अलग-अलग तरह की किताबों के पाठकों ने हिस्सा लिया। ❑

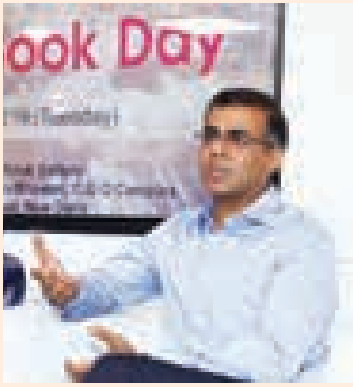

प्रकाशन के बदले परिदृश्य पर बात करते श्री माथुर

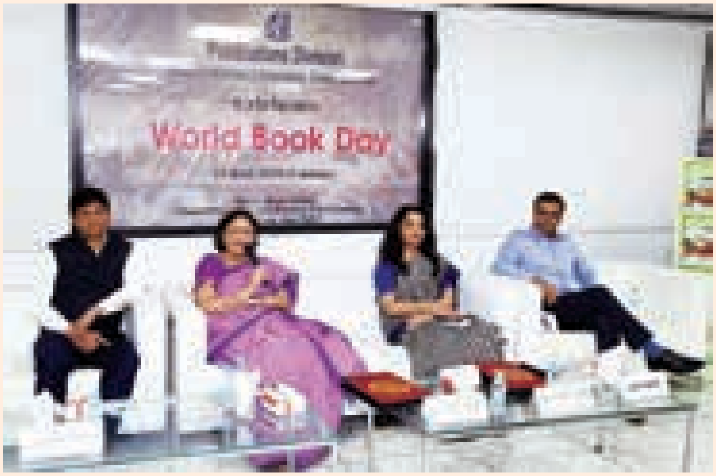

पिंकी और बंटी
थ्रथ्रथ्र...आज तो मेरे दाँतों में अचानक दर्द है पिंकी!
ओह! तो चलो, दाँत उखड़वा लो बंटी!
डॉक्टर के पास-
दाँत उखाड़ना पड़ेगा! उखाड़ दूँ!?
दर्द करेगा...
उखाड़ दीजिए!
अंकल जल्दी!
जब दाँत उखाड़ जाने लगा-
थर्रर्रर्र...
बाहर बैठे मरीज घबरा गए!
म-म...मुझे बचाओ!!
थर्रर्रर्र.....
और जाती है-
पिंकी! बंटी को ले जाओ! दाँत उखड़ गया है! मैंने दवाएं लिख दी हैं!
आ....
फीस कितनी?
हजार रुपये निकालो लड़के!
लेकिन डेंटिस्ट में तो फीस मात्र सौ रुपये बताए हैं!?
बंटी की चीख से डरकर मेरे 4 मरीज जो भाग गए, उसके!

वार्षिक मूल्य : ₹ 160
आर एन आई 699/57
डाक रजिस्टर्ड सं. डी एल (एस) – 05/3214/2018–20
बिना पूर्व भुगतान के साथ आर.एम.एस.
दिल्ली से पोस्ट करने के लिए लाइसेंस यू (डी एन)–51/2018–20
08 मई, 2019 को प्रकाशित • 18–19 मई 2019 को डाक द्वारा जारी

RNI 699/57
Postal Regd. No. DL (S) - 05/3214/2018-20
Licenced U (DN) - 51/2018-20
to post without pre-payment at RMS Delhi

प्रकाशक व मुद्रक : डॉ. साधना राउत, प्रधान महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003
मुद्रक : **इंडिया ऑफसेट प्रैस,** ए–1, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली।
संपादक : आभा गौड़